ISSN 2278-1633 ANTIM JAN

गांधी दर्शन
अंतिम जन

वर्ष-6, अंक: 5, संख्या-43 अक्टूबर 2023 मूल्य: ₹20

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति संग्रहालय

समिति के दो परिसर हैं- गांधी स्मृति और गांधी दर्शन।

गांधी स्मृति, 5, तीस जनवरी मार्ग, नई दिल्ली पर स्थित है। इस भवन में उनके जीवन के अंतिम 144 दिनों से जुड़े दुर्लभ चित्र, जानकारियाँ और मल्टीमीडिया संग्रहालय है।

दूसरा परिसर गांधी दर्शन राजघाट पर स्थित है। यहाँ 'मेरा जीवन ही मेरा संदेश' प्रदर्शनी, डोम थियेटर और राष्ट्रीय स्वच्छता केंद्र संग्रहालय है।

दोनों परिसर के संग्रहालय प्रतिदिन प्रातः 10 से शाम 5:30 तक खुलते हैं ।
(सोमवार एवं राजपत्रित अवकाश को छोड़ कर)

ISSN 2278 A 1633 ANTIM JAN

गांधी दर्शन
अंतिम जन

वर्ष-6, अंक: 5, संख्या-43
अक्टूबर 2023

संरक्षक
विजय गोयल
उपाध्यक्ष, गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति

प्रधान सम्पादक
डॉ. ज्वाला प्रसाद

सम्पादक
प्रवीण दत्त शर्मा
पंकज चौबे

परामर्श
वेदाभ्यास कुंडू

प्रबन्ध सहयोग
शुभांगी गिरधर

आवरण व रेखांकन
संजीव शाश्वती

मूल्य : ₹ 20
वार्षिक सदस्यता : ₹ 200
दो साल : ₹ 400
पांच साल : ₹ 500

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति
गांधी दर्शन, राजघाट, नई दिल्ली-110002
फोन : 011-23392710 फैक्स : 011-23392706
ई-मेल : antimjangsds@gmail.com
2010gsds@gmail.com

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, राजघाट, नई दिल्ली-110002, की ओर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

लेखकों द्वारा उनकी रचनाओं में प्रस्तुत विचार एवं दृष्टिकोण उनके अपने हैं, गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, राजघाट, नई दिल्ली के नहीं।
समस्त मामले दिल्ली न्यायालय में ही विचाराधीन।

मुद्रक
पोहोजा प्रिंट सोल्यूशंस प्रा. लि., दिल्ली - 110092

इस अंक में

उपाध्यक्ष की कलम से... 2
सम्पादकीय 3
धरोहर
उपवास का महत्व -*मोहनदास करमचंद गांधी* 5
भाषण
आज भी प्रासंगिक हैं-गांधी विचार -*श्री नरेंद्र मोदी* 10
चिंतन
भारतीय परम्परा से वर्तमान तक संवाद की समस्याएँ और सम्भावनाएँ -*राधावल्लभ त्रिपाठी* 15
विशेष
नेताजी का संघर्ष पथ अज्ञात में बड़ी छलाँग -*रामबहादुर राय* 25
विमर्श
स्वराज की तत्त्वमीमांसा -*नंद किशोर आचार्य* 32
कुछ कम प्रचलित घटनाएं -*डा. वर्षा दास* 38
मैं आज तक जिंदा पड़ा हूँ.... -*प्रो. मनोज कुमार* 42
राम नाम, रामधुन एवं राष्ट्रसेवा -*अमित त्यागी* 47
कविता
नरेश अग्रवाल की कविताएं 52
मोनिका राज की कविताएं 54
फोटो में गांधी 57
बचपन
शारन्या पाठक 58
चंद्रयान-3 -*रंगनाथ द्विवेदी* 59
लालची मित्र 62
गतिविधियाँ 63

शांत किंतु दृढ़ थे गांधी

2 अक्टूबर 1869 को गुजरात की भूमि पर जब गांधीजी का जन्म हुआ, तो किसी ने नहीं सोचा था कि साधारण व्यक्तित्व वाला यह बच्चा आगे चलकर भारत ही नहीं अपितु दुनिया की राजनीतिक व्यवस्था परिवर्तित कर देगा। लेकिन गांधी ने प्रबल इच्छाशक्ति और दृढ़ इरादों के दम पर दुनिया भर में स्वयं को स्थापित किया।

महात्मा गांधी एक शांत स्वभाव के मृदुभाषी व्यक्ति थे। सहज और सरल भाषा में बातें करना उनकी आदत थी। लेकिन इन सबके बावजूद वे दृढ़ इरादों और जीवट स्वभाव वाले व्यक्ति थे। चाहे परिस्थिति कैसी भी हो, लेकिन लोगों के हित में वे जोखिम लेने से कभी पीछे नहीं हटते थे। जोखिम उठाने की उनकी प्रकृति ने ही उन्हें बैरिस्टर मोहनदास करमचंद गांधी से महान महात्मा गांधी बनाया।

महात्मा गांधी के साथ दक्षिण अफ्रीका में दो ऐसे वाकये हुए, जिनसे उनकी जिंदगी बदल गई। वे जब दक्षिण अफ्रीका में पहुंचे, तो वहां रंगभेद का माहौल था। अश्वेत होने के कारण उन्हें व अन्य भारतीयों को अनेक समस्याएं झेलनी पड़ी। एक बार तो प्रथम श्रेणी का रेल टिकट होने के बावजूद उन्हें रेल से बाहर धक्का दे दिया। एक अन्य घटना में दक्षिण अफ्रीका की अदालत में जज ने उन्हें पगड़ी उतारने को कहा, क्योंकि वे अश्वेत थे।

लेकिन महात्मा गांधी इन अपमानजनक घटनाओं से झुके नहीं। अपितु अन्याय और अत्याचार से लड़ने का उनका इरादा और दृढ़ हुआ। यही कारण है कि पहले दक्षिण अफ्रीका में 21 साल तक संघर्ष करके, उन्होंने भारतीयों को न्याय दिलवाया। उसके बाद भारत में भी एक के बाद एक आंदोलन करके उन्होंने ब्रिटिश सरकार की नाक में दम कर दिया।

आजज रूरतइ सब ातक िह ै,म हात्माग ांधीक ेज ीवनक ोअ ात्मसाति कयाज ाए।ख ासकर युवाओं व बच्चों को उनके जीवन से प्रेरणा लेना चाहिए और अपने जीवन को भी महान बनाना चाहिए।

अंतिम जन का अक्टूबर अंक आपके समक्ष है। आशा है आपको इस अंक में संकलित सामग्री पसंद आएगी।

विजय गोयल

गांधी विचार में है विश्व की समस्याओं का समाधान

महात्मा गांधी को उनकी 154वीं जयंती पर याद करते हुए हम भारतवासियों को गर्व की अनुभूति होती है। गांधीजी ऐसे व्यक्ति हैं, जिनके विचार और भी प्रासंगिक हो रहे हैं। आज पूरी दुनिया को उनके दिखाए रास्ते पर चलने की जरूरत महसूस हो रही है। अलग-अलग समस्याओं से जूझते हुए विश्व को गांधी विचारों में ही समाधान मिलता प्रतीत हो रहा है।

अपनी पुस्तक 'हिन्द स्वराज' में उन्होंने मशीनों का विरोध किया है और हाथ के श्रम को महत्व दिया है। मशीनीकरण के विरोध के जरिए उन्होंने लोगों को समझाया है कि अनावश्यक मशीनीकरण पर्यावरण को हानि पहुंचाता है। गांधीजी ने भारतवासियों को चरखे से सूत कातने व उससे बुने वस्त्र पहनने को पहने के लिए प्रेरित किया। इसके पीछे उनका उद्देश्य स्वदेशी के प्रति अलख जगाना तो था ही, साथ ही कपड़ा मिलों से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थों और कचरे को कम करना भी था। गांधी जी प्रकृति प्रेमी थे और चाहते थे कि इस सुंदर प्रकृति को निःस्वार्थ हेतु मानव खराब ना करे।

गांधीजी ग्राम्य विकास के बड़े पक्षधार थे। गांवों के उत्थान हेतु सलाह देते हुए गांधीजी 1946 में हरिजन सेवक में लिखते हैं, ''देहातवालों में ऐसी कला और कारीगरी का विकास होना चाहिए, जिससे बाहर उनकी पैदा की हुई चीजों की कीमत की जा सके। जब गांवों का पूरा-पूरा विकास हो जाएगा, तो देहातियों की बुद्धि और आत्मा को संतुष्ट करने वाली कला-कारीगरी के धनी स्त्री-पुरूषों की गांवों में कमी नहीं रहेगी।''

गांधीजी के विचार सदैव प्रासंगिक हैं। इसकी सबसे बड़ी वजह यह है कि उनके विचारों का उन्होंने व्यवहारिक प्रयोग किया है। आज दुनिया के सामने गांधी का रास्ता सर्वोत्तम और सतत् है। उनकी 154वीं जयंती पर उनके कार्यों को आत्मसात करना ही हमारी उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

अंतिम जन के अक्टूबर अंक में रामबहादुर राय, राधावल्लभ त्रिपाठी, नंदकिशोर आचार्य, डॉ वर्षा दास, प्रो मनोज कुमार जैसे वरिष्ठ विचारकों के आलेख सम्मिलित किए गए हैं। इसके अलावा सभी स्थाई स्तंभ भी शामिल है।

पत्रिका आपको कैसी लगी। आपकी प्रतिक्रियाओं का हमें इंतजार रहेगा।

डॉ. ज्वाला प्रसाद
निदेशक

आपके ख़त

शांति और अहिंसा

अंतिम जन जुलाई अंक साभार प्राप्त हुआ। शांति और जीवन शीर्षक से संपादकीय चिंतन में शांति और प्रेम स्थापना के विषय में उपयोगी एवं सम्यक विचार प्रस्तुत किए गए हैं। दुनिया के सभी धर्मों का घर है भारत, व्याख्यान में श्री नरेंद्र मोदी का उद्‌बोधन सर्वथा यथार्थपूर्ण और संपूर्ण विश्व के लिए सुसंदेश है। अन्य आलेखों, जैसे हृदय की महानता, गांधी जी का चंपारण सत्याग्रह, बापू की अंतिम यात्रा, वैश्विक युगद्रष्टा-महात्मा गांधी आदि सभी प्रस्तुतियाँ पठनीय और स्तरीय हैं। श्री सदानंद शाही और दीपक जायसवाल की कविताएँ प्रभावपूर्ण तथा सारगंभीर लगीं। हर्ष का विषय है कि पत्रिका में बालसाहित्य को भी अपेक्षित स्थान दिया जा रहा है, इसके अंतर्गत बाल कविताएँ और बाल कहानियाँ बालोपयोगी और संदेशप्रद हैं।

गौरीशंकर वैश्य विनम्र

117, आदिलनगर, विकासनगर लखनऊ 226022

दुर्लभ जानकारी

गांधीवादी पत्रिका अंतिम जन की आज के समय में विशेष महता है। यह पत्रिका समाज को नई दिशा देने वाली है। गांधी की सामाजिकस्‍ वीकार्यताप ूरीद ुनियाम ेंह ैं।व ेद ुनियाक ेप्र मुखम हान लोगोंम ेंस र्वश्रेष्ठह ैं।ि वचारक ोप्र गाढ़ताग ांधीम ेंस बसेज़्‍ यादाह ै। सत्य और अहिंसा के रास्ते से दुनिया को मार्ग दिखाना गांधी की सबसे बड़ीद ेनह ै।अ ंतिमज नप त्रिकाग ांधीि वचारक ोप्र चारितप्र सारित करने का कार्य कर रही है। इसे बच्चे बच्चे तक पहुंचाना चाहिए।

गांधी जी का दुर्लभ चित्र दिया गया है। बच्चों की कहानी भी सुन्दर ढंग से प्रस्तुत की गई है। गांधी को समझने के लिए पत्र-पत्रिकाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

बहुत बहुत धन्यवाद।

टिंकू कुमार

पुलिस कॉलनी, झारखंड

बुरा किसी का सोचना बुरा, न कोई कारण मेरे पास...

क्या ऐसा जो साथ चलेगा, वही एकत्रित करना चाहूँ।
तजने मुझको अवगुण सारे, देश प्रेम उर भरना चाहूँ।
छोड़ चलूँ हर उधोड़बुन को, तिमिर समूचा हरना चाहूँ।
पर बड़े बोल बोलना बुरा, मान लूँ कैसे ख़ुद को ख़ास...

भला-बुरा किसको समझाऊँ, अपनी कमी देख लूँ पहले।
किसे उठाऊँ किसको पटकूँ, क्यों मारूँ नहले पर दहले।
होना-जाना क्या इससे जो, मन तेरी-मेरी कर बहले।
झूठ ठीकरा फोड़ना बुरा, अक्ल क्यों चरने जाए घास...

जैसे कर्म प्रारब्धा वैसी, उसे सहूँ मैं इसे सहूँ मैं।
बिन प्रयोग कैसे सच जानूँ, मन को भाए जिसे गहूँ मैं।
समझ सभी की अपनी-अपनी, लीक चलो रे किसे कहूँ मैं।
रस्ते चलते टोकना बुरा, उद्देश्य मुझे नहीं क्या भास...

अगर सरलता फलती हो तो, अगर कठिनता टलती हो तो।
बन जाए कुछ काम किसी का, बनूँ सहारा चलती हो तो।
हाथ जोड़कर सच्चे मन से, क्षमा माँग लूँ गलती हो तो।
दण्ड और का भोगना बुरा, परवश नर्क में करना वास...

सर्व स्नेहिल आप कहो तो, रच दूँ मुखड़ा मधुर गीत का।
कुरीतियों से निभे न मेरी, मैं शुभचिन्तक भली रीत का।
छओं तु का आनन्द चाहूँ, मिल जाए सानिध्य मीत का।
दोष समय पर थोपना बुरा, तजूँ मैं क्यों अपनों से हास...

सदाचार की सीख यही है, लेना-देना बाट एक ही।
कथनी-करनी रखूँ सरीसी, मुझको भाता हृदय नेक ही।
और लक्ष्य क्या इस जीवन का, सबसे बढ़कर सत्य टेक ही।
भाग किसी का कोसना बुरा, रखूँ क्यों हिय में ऐसी आस...

द्वारका प्रसाद तापड़िया

31, बंसत विहार, वैशाली मार्ग, बजरी मण्डी रोड़, पश्चिम,

जयपुर, राजस्थान - 302034

मो. 9460274412

उपवास का महत्व

मोहनदास करमचंद गांधी

मजदूरों ने शुरू के दो हफ्तों में खूब हिम्मत दिखाई; शांति भी खूब रखी; प्रतिदिन की सभाओं में वे बड़ी संख्या में हाजिर भी रहे। प्रतिज्ञा का स्मरण मैं रोज उन्हें कराता ही था। वे रोज पुकार-पुकार कर कहते थे, 'हम मर मिटेंगे, पर अपनी टेक कभी न छोड़ेंगे।'

लेकिन आखिर वे कमजोर पड़ते जान पड़े। और जिस प्रकार कमजोर आदमी हिंसक होता है, उसी प्रकार उनमें जो कमजोर पड़े वे मिल में जानेवालों का द्वेष करने लगे और मुझे डर मालूम हुआ कि कहीं वे किसी के साथ जबरदस्ती न कर बैठें। रोज की सभा में लोगों की उपस्थिति कम पड़ने लगी। आनेवालों के चेहरों पर उदासीनता छाई रहती थी। मुझे खबर मिली कि मजदूर डगमगाने लगे हैं। मैं परेशान हुआ। यह सोचने लगा कि ऐसे समय में मेरा धर्म क्या हो सकता है। मुझे दक्षिण अफ्रीका के मजदूरों की हड़ताल का अनुभव था। पर यह अनुभव नया था। जिस प्रतिज्ञा के करने में मेरी प्रेरणा थी, जिसका मैं प्रतिदिन साक्षी बनता था, वह प्रतिज्ञा कैसे टूट सकती है? इस विचार को आप चाहे मेरा अभिमान कह लीजिए अथवा मजदूरों के और सत्य के प्रति मेरा प्रेम कह लीजिए।

सबेरे का समय था। मैं सभा में बैठा था। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि मुझे क्या करना चाहिए। किंतु सभा में ही मेरे मुँह से निकल गया, 'यदि मजदूर फिर से दृढ़ न बनें और फैसला होने तक हड़ताल को चला न सकें, तो मैं तब तक के लिए उपवास करूँगा।'

जो मजदूर हाजिर थे, वे सब हक्के-बक्के रह गए। अनसूया बहन की आँखों से आँसू की धारा बह चली। मजदूर बोल उठे, 'आप नहीं, हम उपवास करेंगे। आपको उपवास नहीं करना चाहिए। हमें माफ कीजिए। हम अपनी प्रतिज्ञा का पालन करेंगे।'

मैंने कहा 'आपको उपवास करने की जरूरत नहीं है। आपके लिए तो यही बस है कि आप अपनी प्रतिज्ञा का पालन करें। हमारे पास पैसा नहीं है। हम मजदूरों को भीख का अन्न खिलाकर हड़ताल चलाना नहीं चाहते। आप कुछ मजदूरी कीजिए और उससे अपनी रोज की रोटी के लायक पैसा कमा लीजिए।ए ेसाक रेंगेत ोि फरह ड़तालि कतनेह ोि दनक योंन च ले,अ ाप निश्चिंत रह सकेंगे। मेरा उपवास तो अब फैसले से पहले न छूटेगा।'

सबेरे का समय था। मैं सभा में बैठा था। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि मुझे क्या करना चाहिए। किंतु सभा में ही मेरे मुँह से निकल गया, 'यदि मजदूर फिर से दृढ़ न बनें और फैसला होने तक हड़ताल को चला न सकें, तो मैं तब तक के लिए उपवास करूँगा।' जो मजदूर हाजिर थे, वे सब हक्के-बक्के रह गए। अनसूया बहन की आँखों से आँसू की धारा बह चली। मजदूर बोल उठे, 'आप नहीं, हम उपवास करेंगे। आपको उपवास नहीं करना चाहिए। हमें माफ कीजिए। हम अपनी प्रतिज्ञा का पालन करेंगे।'

वल्लभभाई पटेल मजदूरों के लिए म्युनिसिपैलिटी में काम खोज रहे थे, पर वहाँ कुछ काम मिलने की संभावना न थी। आश्रम की बुनाई-शाला में रेत का भराव करने की जरूरत थी। मगनलाल गांधी ने सुझाया कि इस काम में बहुत से मजदूर लगाए जा सकते हैं। मजदूर इसे करने को तैयार हो गए। अनसूया बहन ने पहली टोकरी उठाई और नदी में से रेत की टोकरियाँ ढोनेवाले मजदूरों की एक कतार खड़ी हो गई। वह दृश्य देखने योग्य था। मजदूरों में नयाब लअ ाग या।उ न्हेंप ैसेच ुकानेवालेच ुकाते-चुकाते थक गए।

इस उपवास में एक दोष था। मैं ऊपर लिख चुका हूँ कि मालिकों के साथ मेरा मीठा संबंध था। इसलिए उन पर उपवास का प्रभाव पड़े बिना रह ही नहीं सकता था। मैं तो जानता था कि सत्याग्रही के नाते मैं उनके विरुद्ध उपवास कर ही नहीं सकता; उन पर कोई प्रभाव पड़े तो वह मजदूरों की हड़ताल का ही पड़ना चाहिए। मेरा प्रायश्चित उनके दोषों के लिए नहीं था; मजदूरों के दोष के निमित्त से था। मैं केवल बिनती ही कर सकता था।

इस उपवास में एक दोष था। मैं ऊपर लिख चुका हूँ कि मालिकों के साथ मेरा मीठा संबंध था। इसलिए उन पर उपवासक ाप्र भावप ड़े बिना रह ही नहीं सकता था। मैं तो जानता था कि सत्याग्रही के नाते मैं उनके विरुद्ध उपवास कर ही नहीं सकता; उन पर कोई प्रभाव पड़े तो वह मजदूरों की हड़ताल का ही पड़ना चाहिए। मेरा प्रायश्चित उनके दोषों के लिए नहीं था; मजदूरों के दोष के निमित्त से था। मैं केवल बिनती ही कर सकता था। उनके विरुद्ध उपवास करना उन पर ज्यादती करने के समान था। फिर भी मैं जानता था कि मेरे उपवास का प्रभाव उन पर पड़े बिना रहेगा ही नहीं। प्रभाव पड़ा भी। किंतु मैं अपने उपवास को रोक नहीं सकता था। मैंने स्पष्ट देखा कि ऐसा दोषमय उपवास करना मेरा धर्म है।

मैंने मालिकों को समझाया: 'मेरे उपवास के कारण आपको अपना मार्ग छोड़ने की तनिक भी जरूरत नहीं।' उन्होंने मुझे कड़वे-मीठे ताने भी दिए। उन्हें वैसा करने का अधिकार था।

सेठ अंबालाल इस हड़ताल के विरुद्ध दृढ़ रहनेवालों में अग्रगण्य थे। उनकी दृढ़ता आश्चर्यजनक थी। उनकी निष्कपटता भी मुझे उतनी ही पसंद आई। उनसे लड़ना मुझे प्रिय लगा। उनके जैसे अगुवा जिस विरोधी दल में थे, उस पर उपवास का पड़ने वाला अप्रत्यक्ष प्रभाव मुझे अखरा। फिर, उनकी धर्मपत्नी श्री सरलादेवी का मेरे प्रति सगी बहन जैसा प्रेम था। मेरे उपवास से उन्हें जो घबराहट होती थी, वह मुझसे देखी नहीं जाती थी।

मेरे पहले उपवास में अनसूयाबहन, दूसरे कई मित्र और मजदूर साथी बने। उन्हें अधिक उपवास न करने के लिएम ैंम ुश्किलस ेस मझास का।इ सप्र कारच ारोंअ ोर प्रेममय वातावरण बन गया। मालिक केवल दयावश होकर समझौते का रास्ता खोजने लगे। अनसूया बहन के यहाँ उनकी चर्चाएँ चलने लगीं। श्री आनंदशंकर ध्रुव भी बीच में पड़े। आखिर वे पंच नियुक्त हुए और हड़ताल टूटी। मुझे केवल तीन उपवास करने पड़े। मालिकों ने मजदूरों को मिठाई बाँटी। इक्कीसवें दिन समझौता हुआ। समझौते की सभा में मिल-मालिक और उत्तरी विभाग के कमिश्नर मौजूद थे। कमिश्नर ने मजदूरों को सलाह दी थी: 'आपको हमेशा मि. गांधी जैसा कहें वैसा करना चाहिए।' इस घटना के बाद तुरंत ही मुझे इन्हीं कमिश्नर से लड़ना पड़ा था। समय बदला इसलिए वे भी बदल गए और खेड़ा के पाटीदारों को मेरी सलाह न मानने की बात कहने लगे।

यहाँ एक दिलचस्प और करुणाजनक घटना का उल्लेख करना उचित जान पड़ता है। मालिकों की बनवाई हुई मिठाई बहुत ज्यादा थी और सवाल यह खड़ा हो गया था कि वह हजारों मजदूरों में कैसे बाँटी जाय? जिस पेड़ की छाया तले मजदूरों ने प्रतिज्ञा की थी वहीं उसे बाँटना उचित है, वह सोचकर और दूसरी जगह हजारों मजदूरों को इक्ट्ठा करना कष्टप्रद होगा, यह समझकर पेड़ के आसपास के खुले मैदान में बाँटने का निश्चय हुआ था। अपने भोलेपन के कारण मैंने यह मान लिया था कि इक्कीस दिन तक नियमन में रहे हुए मजदूर बिना प्रयत्न के कतार में खड़े होकर मिठाई ले लेंगे और अधीर बनकर उस पर टूट न पड़ेंगे। पर मैदान में बाँटने की दो-तीन रीतियाँ आजमाई गईं और वे विफल हुईं। दो-तीन मिनट काम ढंग से चलता और फिर तुरंत बँधी कतार टूट जाती। मजदूरों के नेताओं ने

खूब कोशिश की, पर वह व्यर्थ सिद्ध हुई। अंत में भीड़, कोलाहल और छीनाझपटी यहाँ तक बढ़ गई कि कुछ मिठाई कुचलकर बरबाद हो गई। मैदान में बाँटना बंद करना पड़ा और बची हुई मिठाई को मुश्किल से बचाकर सेठ अंबालाल के मिर्जापुरवाले बँगले पर पहुँचाया जा सका। दूसरे दिन यह मिठाई बँगले के मैदान में ही बाँटनी पड़ी।

इस घटना में निहित हास्यरस तो स्पष्ट ही है। परंतु उसके करुण रस का उल्लेखक रनाज रूरीहै।' एकट`क' वाले पेड़ के पास मिठाई न बँट सकने के कारण का पता लगाने पर मालूम हुआ कि मिठाई बँटने की खबर पाकर अहमदाबाद के भिखारी वहाँ आ पहुँचे थे और उन्होंने कतार तोड़कर मिठाई झपट लेने की कोशिश की थी।

यह देश भुखमरी से इतना पीड़ित है कि भिखारियों की संख्या दिनों दिन बढ़ती जाती है और वे भोजन पाने के लिए साधारण मर्यादा का उल्लंघन करते हैं। धनवान लोग ऐसे भिखारियों के लिए काम की व्यवस्था करने के बदले बिना विचारे भिक्षा देकर उन्हें पोसते हैं।

वह सप्ताह

दक्षिण में थोड़ी यात्रा करके मैं बम्बई पहुँचा। बम्बई की हड़ताल संपूर्ण थी। यहाँ कानून की सविनय अवज्ञा की तैयारी कर रखी थी। जिनकी अवज्ञा की जा सके ऐसी दो–तीन चीजें थीं। कानून रद्द किये जाने लायक थे और जिनकी अवज्ञा सब सरलता से कर सकते थे, उनमें से एक का ही उपयोग करने का निश्चय था। नमक–कर का कानून सबको अप्रिय था। उस कर को रद्द कराने के लिए बहुत कोशिशें हो रही थीं। अतएव मैंने एक सुझाव यह रखा था कि सब लोग बिना परवाने के अपने घर में नमक बनायें। दूसरा सुझाव सरकार द्वारा जब्त की हुई पुस्तकें छपाने और बेचने का था। ऐसी दो पुस्तकें मेरी ही थी: हिन्द स्वराज्य और सर्वोदय। इन पुस्तकों का छपाना और बेचना सबसे सरल सविनय अवज्ञा मालूम हुई। इसलिए ये पुस्तकें छपायी गयीं और शाम को उपवास छूटने के बाद और चौपाटी की विराट सभा के विसर्जित होने के बाद इन्हें बेचने का प्रबंध किया गया।

दिनांक के शाम को कई स्वयंसेवक ये पुस्तकें बेचने निकल पड़े। इनकी जो कीमत वसूल होती, वह लड़ाई के काम में ही खर्च की जाने वाली थी। एक प्रति का मूल्य चार आना रखा गया था। पर मेरे हाथ पर शायद ही किसी ने चार आने रखे होंगे। अपनी जेब में जो था सो सब देकर किताबें खरीदने वाले बहुतेरे निकल आये । कोई–कोई दस और पाँच के नोट भी देते थे। मुझे स्मरण है कि एक प्रति के लिए 50 रुपये के नोट भी मिले थे। लोगों को समझा दिया गया था कि खरीदने वाले के लिए भी जेल का खतरा है।ल`किनक्ष ाणभरक`ि लएल ोगोंन`ज`लक ाभ ायछ ोड़ दिया था।

7 तारीख को पता चला कि जिन किताबों के बेचने पर सरकार ने रोक लगायी थी, सरकार की दृष्टि से वे बेची नहीं गयी हैं। जो पुस्तकें बिकी हैं वे तो उनकी दूसरी आवृत्ति मानी जाएँगी। जब्त की हुई पुस्तकों में उनकी गिनती नहीं हो सकती। सरकार की ओर से यह कहा गया था कि नई आवृत्ति छपाने, बेचने और खरीदने में कोई गुनाह नहीं है। यह खबर सुनकर लोग निराश हुए।

7 अप्रैल की रात को मैं दिल्ली-अमृतसर जाने के लिए रवाना हुआ। 8 को मथुरा पहुँचने पर कुछ ऐसी भनक कान तक आई कि शायद मुझे गिरफ्तार करेंगे। मथुरा के बाद एक स्टेशन पर गाड़ी रुकती थी। वहाँ आचार्य गिडवानी मिले। उन्होंने मेरे पकड़े जाने के बारे में पक्की खबर दी और जरूरत हो तो अपनी सेवा अर्पण करने के लिए कहा।

''मैं अशांति बढ़ाने नहीं, बल्कि निमंत्रण पाकर अशांति घटाने के लिए जाना चाहता हूँ। इसलिए खेद है कि मुझसे इस आदेश का पालन नहीं हो सकेगा।''

मुझे पलवल स्टेशन पर उतार लिया गया और पुलिस के हवाले किया गया। फिर दिल्ली से आने वाली किसी ट्रेन के तीसरे दर्जे के डिब्बे में मुझे बैठाया गया और साथ में पुलिस का दल भी बैठा। **मथुरा पहुँचने पर मुझे पुलिस की बारक में ले गये। मेरा क्या होगा और मुझे कहाँ ले जाना है, सो कोई पुलिस अधिकारी मुझे बता न सका। सुबह 4 बजे मुझे जगाया गया और बम्बई की ओर जाने वाली मालगाड़ी में बैठा दिया गया।**

पलवल स्टेशन आने के पहले ही पुलिस अधिकारी ने मेरे हाथ पर आदेश-पत्र रखा। आदेश इस प्रकार का था: ''आपके पंजाब में प्रवेश करने से अशांति बढ़ने का डर है, अतएव आप पंजाब की सीमा में प्रवेश न करें।'' आदेश-पत्र देकर पुलिस ने मुझे उतर जाने को कहा। मैंने उतरने से इनकार किया और कहा: ''मैं अशांति बढ़ाने नहीं, बल्कि निमंत्रण पाकर अशांति घटाने के लिए जाना चाहता हूँ। इसलिए खेद है कि मुझसे इस आदेश का पालन नहीं हो सकेगा।''

मुझे पलवल स्टेशन पर उतार लिया गया और पुलिस के हवाले किया गया। फिर दिल्ली से आने वाली किसी ट्रेन के तीसरे दर्जे के डिब्बे में मुझे बैठाया गया और साथ में पुलिस का दल भी बैठा। मथुरा पहुँचने पर मुझे पुलिस की बारक में ले गये। मेरा क्या होगा और मुझे कहाँ ले जाना है, सो कोई पुलिस अधिकारी मुझे बता न सका। सुबह 4 बजे मुझे जगाया गया और बम्बई की ओर जाने वाली मालगाड़ी में बैठा दिया गया।

सूरत पहुँचने पर किसी दूसरे अधिकारी ने मुझे अपने कब्जे में लिया। उसने मुझे रास्ते में कहा: ''आप रिहा कर दिये गये हैं। लेकिन आपके लिए मैं ट्रेन को मरीन लाइन्स स्टेशन के पास रुकवाऊँगा। आप वहाँ उतर जाएँगे, तो ज्यादा अच्छा होगा। कोलाबा स्टेशन पर बड़ी भीड़ होने की संभावना है।'' मैंने उससे कहा कि आपका कहा करने में मुझे प्रसन्नता होगी। वह खुश हुआ और उसने मुझे धन्यवाद दिया। मैं मरीन लाइन्स पर उतरा। वहाँ किसी परिचित की घोड़ागाड़ी दिखायी दी। वे मुझे रेवाशंकर झवेरी के घर छोड़ गये। उन्होंने मुझे खबर दी: ''आपके पकड़े जाने की खबर पाकर लोग क्रुद्ध हो गये हैं और पागल-से बन गये हैं। पायधूनी के पास दंगे का खतरा है। मजिस्ट्रेट और पुलिस वहाँ पहुँच गयी है।''

मैं घर पहुँचा ही था कि इतने में उमर सोबानी और अनसूयाबहन मोटर में आये और उन्होंने मुझे पायधूनी चलने को कहा। उन्होंने बताया, ''लोग अधीर हो गये हैं और बड़े उत्तेजित हैं। हम में से किसी के किये शांत नहीं हो सकते। आपको देखेंगे तभी शांत होंगे।''

मैं मोटर में बैठ गया। पायधूनी पहुँचते ही रास्ते में भारी भीड़ दिखायी दी। लोग मुझे देखकर हर्षोन्मत्त हो उठे। अब जुलूस बना। 'वन्दे मातरम्' और 'अल्लाहो अकबर' के नारों से आकाश गूँज उठा। पायधूनी पर घुड़सवार दिखायी दिये। ऊपर से ईंटों की वर्षा हो रही थी। मैं हाथ जोड़कर लोगों से प्रार्थना कर रहा था कि वे शांत रहें। पर जान पड़ा कि हम भी ईंटों की इस बौछार से बच नहीं पायेंगे।

अब्दुर्रहमान गली में से क्रॉफर्ड मारकेट की ओर जाते हुए जुलूस को रोकने के लिए घुड़सवारों की एक टुकड़ी सामने से आ पहुँची। वे जुलूस को किले की ओर जाने से रोकने की कोशिश कर रहे थे। लोग वहाँ समा नहीं रहे थे। लोगों ने पुलिस की पाँत को चीरकर आगे बढ़ने के लिए जोर लगाया। वहाँ हालत ऐसी नहीं थी कि मेरी आवाज सुनायी पड़ सके। यह देखकर घुड़सवारों की टुकड़ी के अफसर ने भीड़ को तितर-बितर करने का हुक्म दिया और अपने भालों को घुमाते हुए इस टुकड़ी ने एकदम घोड़े दौड़ाने के शुरू कर दिये। मुझे डर लगा कि उनके भाले हमारा काम तमाम कर दें तो आश्चर्य नहीं। पर मेरा

वह डर निराधार था। बगल से होकर सारे भाले रेलगाड़ी की गति से सनसनाते हुए दूर निकल जाते थे। लोगों की भीड़ में दरार पड़ी। भगदड़ मच गई। कोई कुचले गये। कोई घायल हुए। घुड़सवारों को निकलने के लिए रास्ता नहीं था। लोगों के लिए आसपास बिखरने का रास्ता नहीं था। वे पीछे लौटें तो उधार भी हजारों लोग ठसाठस भरे हुए थे। सारा दृश्य भयंकर प्रतीत हुआ। घुड़सवार और जनता दोनों पागल-जैसे मालूम हुए। घुड़सवार कुछ देखते ही नहीं थे अथवा देख नहीं सकते थे। वे तो टेढ़े होकर घोड़ों को दौड़ाने में लगे थे। मैंने देखा कि जितना समय इन हजारों के दल को चीरने में लगा, उतने समय तक वे कुछ देख ही नहीं सकते थे।

इस तरह लोगों को तितर-बितर किया गया और आगे बढ़ने से रोका गया। हमारी मोटर को आगे जाने दिया गया। मैंने कमीशनर के कार्यालय के सामने मोटर रुकवाई और मैं उससे पुलिस के व्यवहार की शिकायत करने के लिए उतरा। इस तरह हमारी दलीलें होती रही। हमारे मत का मेल मिलने वाला न था । मैं यह कहकर बिदा हुआ कि चौपाटी पर सभा करने और लोगों को शांति रखने के लिए समझाने का मेरा इरादा है।

चौपाटी पर सभा हुई। मैंने लोगों को शांति और सत्याग्रह की मर्यादा के विषय में समझाया और बतलाया, ''सत्याग्रह सच्चे का हथियार है। यदि लोग शांति न रखेंगे, तो मैं सत्याग्रह की लड़ाई कभी लड़ न सकूँगा।''

अहमदाबाद से श्री अनसूयावहन को भी खबर मिल चुकी थी कि वहाँ उपद्रव हुआ है। किसी ने अफवाह फैला दी थी कि वे भी पकड़ी गयी हैं। इससे मजदूर पागल हो उठे थे। उन्होंने हड़ताल कर दी थी, उपद्रव भी मचाया था; और एक सिपाही का खून भी हो गया था।

मैं अहमदाबाद गया। मुझे पता चला कि नडियाद के पास रेल की पटरी उखाड़ने की कोशिश भी हुई थी। वीरमगाम में एक सरकारी कर्मचारी का खून हो गया था। अहमदाबाद पहुंचा तब वहाँ मार्शल लॉ जारी था। लोगों में आतंक फैला हुआ था। लोगों ने जैसा किया वैसा पाया और उसका ब्याज भी पाया ।

मुझे कमीशनर मि. प्रेट के पास ले जाने के लिए एक आदमी स्टेशन पर हाजिर था। में उनके पास गया। वे बहुत गुस्से में थे। मैंने उन्हें शान्ति से उत्तर दिया। जो हत्या हुई थी उसके लिए मैंने खेद प्रकट किया। यह भी सुझाया कि मार्शल लॉ की आवश्यकता नहीं है, और पुनः शान्ति स्थापित करने के लिए जो उपाय करने जरूरी हों, सो करने की अपनी तैयारी बतायी। मैंने आम सभा बुलाने की माँग की। यह सभा आश्रम की भूमि पर करने की अपनी इच्छा प्रकट की। उन्हें यह बात अच्छी लगी। जहाँ तक मुझे याद है, मैंने रविवार ता. 13 अप्रैल को सभा की थी। मार्शल लॉ भी उसी दिन अथवा दूसरे दिन रद्द हुआ था। इस सभा में मैंने लोगों को उनके अपने दोष दिखाने का प्रयत्न किया। मैंने प्रायश्चित्त के रूप में तीन दिन के उपवास किये और लोगों को एक दिन का उपवास करने की सलाह दी। जिन्होंने हत्या वगैरा में हिस्सा लिया हो उन्हें मैंने सुझाया कि वे अपना अपराध स्वीकार कर लें।

मैंने अपना धर्म स्पष्ट देखा। जिन मजदूरों आदि के बीच मैंने इतना समय बिताया था, जिनकी मैंने सेवा की थी और जिनके विषय में मैं अच्छे व्यवहार की आशा रखता था, उन्होंने उपद्रव में हिस्सा लिया, यह मुझे असह्य मालूम हुआ और मैंने अपने को उनके दोष में हिस्सेदार माना ।

जिस तरह मैंने लोगों को समझाया कि वे अपना अपराध स्वीकार कर लें, उसी तरह सरकार को भी गुनाह माफ करने की सलाह दी। दोनों में से किसी एक ने भी मेरी बात नहीं सुनी।

स्व॰ रमणभाई आदि नागरिक मेरे पास आये और मुझे सत्याग्रह मुलतवी करने के लिए मनाने लगे। पर मुझे मनाने की आवश्यकता ही नहीं रही थी। मैंने स्वयं निश्चय कर लिया था कि जब तक लोग शांति का पाठ न सीख लें, तब तक सत्याग्रह मुलतवी रखा जाये। इससे वे प्रसन्न हुए।

कुछ मित्र नाराज भी हुए। उनका ख़याल यह था कि अगर मैं सब कहीं शांति की आशा रखूँ और सत्याग्रह की यही शर्त रहे, तो बड़े पैमाने पर सत्याग्रह कभी चल ही नहीं सकता। मैंने अपना मतभेद प्रकट किया। जिन लोगों में काम किया गया है, जिनके द्वारा सत्याग्रह करने की आशा रखी जाती है, वे यदि शान्ति का पालन न करें, तो अवश्य ही सत्याग्रह कभी चल नहीं सकता। मेरी दलील यह थी किस त्याग्रहीन ेताओंक ेइ सप्र कारक ेम र्यादितश ान्ति बनाये रखने की शक्ति प्राप्त करनी चाहिए। अपने इन विचारों को मैं आज भी बदल नहीं सका हूँ।

भाषण

आज भी प्रासंगिक हैं- गांधी विचार

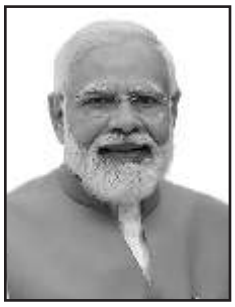

श्री नरेंद्र मोदी

मेरे प्यारे परिवारजनों, नमस्कार। 'मन की बात' के एक और एपिसोड में मुझे आप सभी के साथ देश की सफलता को, देशवासियों की सफलता को, उनकी inspiring life journey को, आपसे साझा करने का अवसर मिला है। इन दिनों सबसे ज्यादा पत्र, सन्देश, जो मुझे मिले हैं वो दो विषयों पर बहुत अधिक है। पहला विषय है, चंद्रयान-3 की सफल landing और दूसरा विषय है दिल्ली में G-20 का सफल आयोजन। देश के हर हिस्से से, समाज के हर वर्ग से, हर उम्र के लोगों के, मुझे, अनगिनत पत्र मिले हैं। जब चंद्रयान-3 का Lander चंद्रमा पर उतरने वाला था, तब करोड़ों लोग अलग-अलग माध्यमों के जरिए एक साथ इस घटना के पल-पल के साक्षी बन रहे थे। ISRO के YouTube Live Channel पर 80 लाख से ज्यादा लोगों ने इस घटना को देखा- अपने आप में ही एक record है। इससे पता चलता है कि चंद्रयान-3 से करोड़ों भारतीयों का कितना गहरा लगाव है। चंद्रयान की इस सफलता पर देश में इन दिनों एक बहुत ही शानदार Quiz Competition भी चल रहा है -प्रश्नस्पर्धा और उसे नाम दिया गया है- 'चंद्रयान-3 महाक्विज'। MyGov portal पर हो रहे इस competition में अब तक 15 लाख से ज्यादा लोग हिस्सा ले चुके हैं। MyGov की शुरुआत के बाद यह किसी भी Quiz में सबसे बड़ा participation है। मैं तो आपसे भी कहूँगा कि अगर आपने अब तक इसमें हिस्सा नहीं लिया है तो अब देर मत करिए, अभी इसमें, छः दिन और बचे हैं। इस Quiz में जरुर हिस्सा लीजिये।

मेरे परिवारजनों, चंद्रयान-3 की सफलता के बाद G-20 के शानदार आयोजन ने हर भारतीय की खुशी को दोगुना कर दिया। भारत मंडपम तो अपने आप में एक celebrity की तरह हो गया है। लोग उसके साथ selfie खिंचा रहे हैं और गर्व से post भी कर रहे हैं। भारत ने इस Summit में African Union को G-20 में Full Member बनाकर अपने नेतृत्व का लोहाम नवायाह ै।अ ापकोध यानह ोगा,ज बभ ारतब हुतस मृद्धथ ा,उ स जमाने में, हमारे देश में, और दुनिया में, पैसा Route की बहुत चर्चा होती थी। ये पैसा Route, व्यापार-कारोबार का बहुत बड़ा माध्यम था। अब आधुनिक जमाने में भारत ने एक और Economic Corridor, G-20 में सुझाया है। ये है India & Middle East & Europe Economic

चंद्रयान-3 की सफलता के बाद G-20 के शानदार आयोजन ने हर भारतीय की खुशी को दोगुना कर दिया। भारत मंडपम तो अपने आप में एक celebrity की तरह हो गया है। लोग उसके साथ selfie खिंचा रहे हैं और गर्व से post भी कर रहे हैं। भारत ने इस Summit में African Union को G-20 में Full Member बनाकरअ पनेन ेतृत्वक ाल ोहा मनवाया है।

Corridor। ये Corridor आने वाले सैकड़ों वर्षों तक विश्व व्यापार का आधार बनने जा रहा है, और इतिहास इस बात को हमेशा याद रखेगा कि इस Corridor का सूत्रपात भारत की धरती पर हुआ था।

साथियो, G-20 के दौरान जिस तरह भारत की युवाशक्ति, इस आयोजन से जुड़ी, उसकी आज, विशेष चर्चा आवश्यक है। साल-भर तक देश के अनेकों universities में G-20 से जुड़े कार्यक्रम हुए। अब इसी श्रृंखला में दिल्ली में एक और exciting programme होने जा रहा है- 'G-20 University Connect Programme'। इस programme के माध्यम से देश-भर के लाखों University students एक-दूसरे से जुड़ेंगे। इसमें IITs, IIMs, NIT, और Medical Colleges जैसे कई प्रतिष्ठित संस्थान भी भाग लेंगे। मैं चाहूँगा कि अगर आप college student हैं, तो, 26 सितम्बर को होने वाले इस कार्यक्रम को जरुर देखिएगा, इससे जरुर जुड़िएगा। भारत के भविष्य में, युवाओं के भविष्य पर, इसमें, बहुत सारी दिलचस्प बातें होने वाली हैं। मैं खुद भी इस कार्यक्रम में शामिल होऊंगा। मुझे भी अपने college student से संवाद का इंतजार है।

मेरे परिवारजनों, आज से दो दिन बाद, 27 सितम्बर को 'विश्व पर्यटन दिवस' है। पर्यटन को कुछ लोग सिर्फ सैर-सपाटेक ेत ैारप रद ेखतेह ैं,ल ेकिनप र्यटनक ाए क बहुत बड़ा पहलू 'रोजगार' से जुड़ा है। कहते हैं, सबसे कम Investment में, सबसे ज्यादा रोजगार, अगर कोई sector पैदा करता है, तो वो Tourism Sector ही है। Tourism Sector को बढ़ाने में, किसी भी देश के लिए goodwill, उसके प्रति आकर्षण बहुत matter करता है। बीते कुछ वर्षों में भारत के प्रति आकर्षण बहुत बढ़ा है और G-20 के सफल आयोजन के बाद दुनिया के लोगों का interest भारत में और बढ़ गया है।

साथियो, G-20 में एक लाख से ज्यादा delegates भारत आए। वो यहाँ की विविधता, अलग-अलग परम्पराएं, भांति-भांति का खानपान और हमारी धरोहरों से परिचित हुए। यहाँ आने वाले delegates अपने साथ जो शानदार अनुभव लेकर गए हैं, उससे tourism का और विस्तार होगा। आप लोगों को पता ही है कि भारत में एक से बढ़कर एक world Heritage site भी हैं और इनकी संख्या लगातार बढती जा रही है। कुछ ही दिन पहले शान्तिनिकेतन और कर्नाटक के पवित्र होयसड़ा मंदिरों को World Heritage sites घोषित किया गया है। मैं इस शानदार उपलब्धि के लिए समस्त देशवासियों को बधाई देता हूँ। मुझे 2018 में शान्तिनिकेतन की यात्रा का सौभाग्य मिला था। शान्तिनिकेतन से गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर का जुड़ाव रहा है। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने शान्तिनिकेतन का Motto संस्कृत के एक प्राचीन श्लोक से लिया था। वह श्लोक है -

''यत्र विश्वम भवत्येक नीडम्''

अर्थात, जहाँ एक छोटे से घोंसले में पूरा संसार समाहित हो सकता है।

कर्नाटक के जिन होयसड़ा मंदिरों को UNESCO ने विश्व धरोहर सूची में शामिल किया है, उन्हें, 13वीं शताब्दी के बेहतरीन Architecture के लिए जाना जाता है। इन मंदिरों को UNESCO से मान्यता मिलना, मंदिर निर्माण की भारतीय परंपरा का भी सम्मान है। भारत में अब World Heritage Properties की कुल संख्या 42 हो गई है। भारत का प्रयास है कि हमारे ज्यादा-से-ज्यादा ऐतिहासिक और सांस्कृतिक जगहों को World Heritage Site की मान्यता मिले। मेरा आप सबसे आग्रह है कि जब भी आप कहीं घूमने जाने की योजना बनाएं तो ये प्रयास करें कि भारत की विविधता के दर्शन करें। आप अलग-अलग राज्यों की संस्कृति को समझें, Heritage Sites को देखें। इससे, आप अपने देश के गौरवशाली इतिहास से तो परिचित होंगे ही, स्थानीय लोगों की आय बढ़ाने का भी आप अहम माध्यम बनेंगे।

मेरे परिवारजनों, भारतीय संस्कृति और भारतीय संगीत अब Global हो चुका है। दुनियाभर के लोगों का इनसे लगाव दिनों-दिन बढ़ता ही जा रहा है।

21 साल की कैसमी इन दिनों Instagram पर खूब छाई हुई है। जर्मनी की रहने वाली कैसमी कभी भारत नहीं आई है, लेकिन, वो, भारतीय संगीत की दीवानी है, जिसने, कभी भारत को देखा तक नहीं, उसकी भारतीय संगीत में ये रूचि, बहुत ही Inspiring है। कैसमी जन्म से ही देख नहीं पाती है, लेकिन, ये मुश्किल चुनौती उन्हें

असाधारण उपलब्धियों से रोक नहीं पाई। Music और Creativity को लेकर उनका Passion कुछ ऐसा था कि बचपन से ही उन्होंने गाना शुरू कर दिया। African Drumming कीश ुरुआतत ोउ न्होंनेम हज3 स ालक ी उम्र में ही कर दी थी। भारतीय संगीत से उनका परिचय 5-6 साल पहले ही हुआ। भारत के संगीत ने उनको इतना मोह लिया-इतना मोह लिया कि वो इसमें पूरी तरह से रम गई। उन्होंने तबला बजाना भी सीखा है। सबसे Inspiring बात तो यह है कि वे कई सारी भारतीय भाषाओं में गाने में महारतह ासिलक रच ुकीह ै।स ंस्कृत,ि हंदी,म लयालम, तमिल, कन्नड़ या फिर असमी, बंगाली, मराठी, उर्दू, उन्होंने इन सबमें अपने सुर साधे हैं। आप कल्पना कर सकते हैं, किसी को दूसरी अनजान भाषा की दो-तीन लाइनें बोलनी पड़ जाए तो कितनी मुश्किल आती है, लेकिन कैसमी के लिए जैसे बाएं हाथ का खेल है।

भारतीय संस्कृति और संगीत को लेकर जर्मनी की कैसमीक ेइ सज ुनूनक ेम ैं ह दयस ेस राहनाक रताह ूँ। उनका यह प्रयास हर भारतीय को अभिभूत करने वाला है।

मेरे परिवारजनों, हमारे देश में शिक्षा को हमेशा एक सेवा के रूप में देखा जाता है। मुझे उत्तराखंड के कुछ ऐसे युवाओं के बारे में पता चला है, जो, इसी भावना के साथ बच्चों की शिक्षा के लिए काम कर रहे हैं। नैनीताल जिले में कुछ युवाओं ने बच्चों के लिए अनोखी घोड़ा Library की शुरुआत की है। इस Library की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि दुर्गम से दुर्गम इलाकों में भी इसके जरिए बच्चों तक पुस्तकें पहुँच रही हैं और इतना ही नहीं, ये सेवा, बिल्कुल निशुल्क है। अब तक इसके माधयम से नैनीताल के 12 गाँवों को Cover किया गया है। बच्चों की शिक्षा से जुड़े इस नेक काम में मदद करने के लिए स्थानीय लोग भी खूब आगे आ रहे हैं। इस घोड़ा Library के जरिए यह प्रयास किया जा रहा है, कि दूरदराज के गाँवों में रहने वाले बच्चों को स्कूल की किताबों के अलावा 'कविताएँ', 'कहानियाँ' और 'नैतिक शिक्षा' की किताबें भी पढ़ने का पूरा मौका मिले। ये अनोखी Library बच्चों को भी खूब भा रही है।

साथियो, मुझे हैदराबाद में Library से जुड़े एक ऐसे ही अनूठे प्रयास के बारे में पता चला है। यहाँ, सातवीं Class में पढ़ने वाली बिटिया 'आकर्षणा सतीश' ने तो कमाल कर दिया है। आपको यह जानकार आश्चर्य हो सकता है कि महज 11 साल की उम्र में ये बच्चों के लिए एक-दो नहीं, बल्कि, सात-सात Library चला रही है। 'आकर्षणा'क ेद ेस ालप हलेइ सकीप्र ेरणात ब मिली, जब वो अपने माता-पिता के साथ एक कैंसर अस्पताल गई थी। उसके पिता जरूरतमंदों की मदद के सिलसिले में वहाँ गए थे। बच्चों ने वहाँ उनसे 'Colouring Book' की माँग की, और यही बात, इस प्यारी-सी गुड़िया को इतनी छू गई कि उसने अलग-अलग तरह की किताबें जुटाने की ठान ली। उसने, अपने आस-पड़ोस के घरों, रिश्तेदारों और साथियों से किताबें इकट्ठा करना शुरू कर दिया और आपको यह जानकार खुशी होगी कि पहली Library उसी कैंसर अस्पताल में बच्चों के लिए खोली गई। जरूरतमंद बच्चों के लिए अलग-अलग जगहों पर इस बिटिया ने अब तक जो सात Library खोली हैं, उनमें अब करीब 6 हजार किताबें उपलब्ध हैं। छोटी-सी 'आकर्षणा' जिस तरह बच्चों का भविष्य संवारने का बड़ा काम कर रही है, वो हर किसी को प्रेरित करने वाला है।

साथियो, ये बात सही है कि आज का दौर Digital Technologyअ ौर E-Booksक ाह ै,ल ेकिन ि फर भ ी किताबें, हमारे जीवन में हमेशा एक अच्छे दोस्त की भूमिका निभाती है। इसलिए, हमें बच्चों को किताबें पढ़ने के लिए प्रेरित करना चाहिए।

मेरे परिवारजनों, हमारे शास्त्रों में कहा गया है -

जीवेषु करुणा चापि, मैत्री तेषु विधीयताम।

अर्थात,ज ीवोंप रक रुणाक ीजिएअ ौरउ न्हेंअ पनाि मत्र बनाइए।ह मारेत ोज यादातरद ेवी-देवताओंक ेस वारीह ी पशु-पक्षी हैं। बहुत से लोग मंदिर जाते हैं, भगवान के दर्शन करते हैं, लेकिन जो जीव-जंतु उनकी सवारी होते हैं, उस तरफ उतना ध्यान नहीं देते। ये जीव-जंतु हमारी आस्था के केंद्र में तो रहने ही चाहिए, हमें इनका हर संभव संरक्षण भी करना चाहिए। बीते कुछ वर्षों में, देश में, शेर, बाघ, तेंदुआ और हाथियों की संख्या में उत्साहवर्धक बढ़ोत्तरी देखी गई है। कई और प्रयास भी निरंतर जारी हैं, ताकि इस धरती पर रह रहे दूसरे जीव-जंतुओं को बचाया जा सके। ऐसा ही एक अनोखा प्रयास राजस्थान के पुष्कर में भी किया जा

रहा है। यहाँ, सुखदेव भट्ट जी और उनकी Team मिलकर वन्य जीवों को बचाने में जुटे हैं, और जानते हैं उनकी Team का नाम क्या है? उनकी Team का नाम है –कोबरा। ये खतरनाक नाम इसलिए है क्योंकि उनकी Team इस क्षेत्र में खतरनाक साँपों का Rescue करने का काम भी करती है। इस Team में बड़ी संख्या में लोग जुड़े हैं, जो सिर्फ एक Call पर मौके पर पहुंचते हैं और अपने Mission में जुट जाते हैं। सुखदेव जी की इस Team ने अब तक 30 हजार से ज्यादा जहरीले साँपों का जीवन बचाया है। इस प्रयास से जहाँ लोगों का खतरा दूर हुआ है, वहींप्र कृतिक ास ंरक्षणभ ाीह ेर हाह ैाय ` Teamअ न्य बीमार जानवरों की सेवा के काम से भी जुड़ी हुई है।

साथियो, तमिलनाडु के चेन्नई में Auto Driver एम. राजेंद्र प्रसाद जी भी एक अनोखा काम कर रहे हैं। वो पिछले 25–30 साल से कबूतरों की सेवा के काम में जुटे हैं। खुद उनके घर में 200 से ज्यादा कबूतर हैं। वहीँ पक्षियों के भोजन, पानी, स्वास्थ्य जैसी हर जरुरत का पूरा ध्यान रखते हैं। इस पर उनका काफी पैसा भी खर्च होता है, लेकिन वो, अपने काम में डटे हुए हैं। साथियो, लोगों को नेक नीयत से ऐसा काम करते देखकर वाकई बहुत सुकून मिलता है, काफी खुशी होती है। अगर आपको भी ऐसे ही कुछ अनूठे प्रयासों के बारे में जानकारी मिले तो उन्हें जरुर Share कीजिए।

मेरे प्यारे परिवारजनों, आजादी का ये अमृतकाल, देश के लिए हर नागरिक का कर्तव्यकाल भी है। अपने कर्तव्य निभाते हुए ही हम अपने लक्ष्यों को पा सकते हैं, अपनी मंजिल तक पहुँच सकते हैं। कर्तव्य की भावना, हम सभी को एक सूत्र में पिरोती है। यू.पी.के सम्भल में, देश ने कर्तव्य भावना की एक ऐसी मिसाल देखी है, जिसे मैं आपसे भी Share करना चाहता हूँ। आप सोचिए, 70 से ज्यादा गाँव हों, हजारों की आबादी हो और सभी लोग मिलकर, एक लक्ष्य, एक ध्येय की प्राप्ति के लिए साथ आ जाएँ, जुट जाएँ ऐसा कम ही होता है, लेकिन, सम्भल के लोगों ने ये करके दिखाया। इन लोगों ने मिलकर जन–भागीदारी और सामूहिकता की बहुत ही शानदार मिसाल कायम की है। दरअसल, इस क्षेत्र में दशकों पहले, 'सोत' नाम की एक नदी हुआ करती थी। अमरोहा से शुरू होकर सम्भल होते हुए बदायूं तक बहने वाली ये नदी एक समय इस क्षेत्र में जीवनदायिनी के रूप में जानी जाती थी। इस नदी में अनवरत जल प्रवाहित होता था, जो यहाँ के किसानों के लिए खेती का मुख्य आधार था। समय के साथ नदी का प्रवाह कम हुआ, नदी जिन रास्तों से बहती थी वहां अतिक्रमण हो गया और ये नदी विलुप्त हो गई। नदी को माँ मानने वाले हमारे देश में, सम्भल के लोगों ने इस सोत नदी को भी पुनर्जीवित करने का संकल्प ले लिया। पिछले साल दिसंबर में सोत नदी के कायाकल्प का काम 70 से ज्यादा ग्राम पंचायतों ने मिलकर शुरू किया। ग्राम पंचायतों के लोगों ने सरकारी विभागों को भी अपने साथ लिया। आपको ये जानकर खुशी होगी कि साल के पहले 6 महीने में ही ये लोग नदी के 100 किलोमीटर से ज्यादा रास्ते का पुनरोद्धार कर चुके थे। जब बारिश का मौसम शुरू हुआ तो यहां के लोगों की मेहनत रंग लाई और सोत नदी, पानी से, लबालब भर गई। यहां के किसानों के लिए यह खुशी का एक बड़ा मौका बनकर आया है। लोगों ने नदी के किनारे बांस के 10 हजार से भी अधिक पौधे भी लगाए हैं, ताकि इसके किनारे पूरी तरह सुरक्षित रहें। नदी के पानी में तीस हजार से अधिक गम्बूसिया मछलियों को भी छोड़ा गया है ताकि मच्छर न पनपें। साथियो, सोत नदी का उदाहरण हमें बताता है कि अगर हम ठान लें तो बड़ी से बड़ी चुनौतियों को पार कर एक बड़ा बदलाव ला सकते हैं। आप भी कर्तव्यप थप रच लतेह ुएअ पनेअ ासपासए ेसेब हुतस ` बदलावों का माध्यम बन सकते हैं।

मेरे परिवारजनों, जब इरादे अटल हों और कुछ सीखने की लगन हो, तो कोई काम, मुश्किल नहीं रह जाता है। पश्चिम बंगाल की श्रीमती शकुंतला सरदार ने इस बात को बिल्कुल सही साबित करके दिखाया है। आज वो कई दूसरी महिलाओं के लिए प्रेरणा बन गई हैं। शकुंतला जी जंगल महल के शातनाला गांव की रहने वाली हैं। लंबे समय तक उनका परिवार हर रोज मजदूरी करके अपना पेट पालता था। उनके परिवार के लिए गुजर–बसर भी मुश्किल थी। फिर उन्होंने एक नए रास्ते पर चलने का फैसला किया और सफलता हासिल कर सबको हैरान कर दिया। आप ये जरुर जानना चाहेंगे कि उन्होंने ये कमाल कैसे किया! इसका जवाब है – एक सिलाई मशीन। एक सिलाई मशीन

के जरिए उन्होंने 'साल' की पत्तियों पर खूबसूरत design बनाना शुरू किया। उनके इस हुनर ने पूरे परिवार का जीवन बदल दिया। उनके बनाए इस अद्‌भुत craft की मांग लगातार बढ़ती जा रही है। शकुंतला जी के इस हुनर ने, न सिर्फ उनका, बल्कि, 'साल' की पत्तियों को जमा करने वाले कई लोगों का जीवन भी बदल दिया है। अब, वो, कई महिलाओं को training देने का भी काम कर रही हैं। आप कल्पना कर सकते हैं, एक परिवार, जो कभी, मजदूरी पर निर्भर था, अब खुद दूसरों को रोजगार के लिए प्रेरित कर रहा है। उन्होंने रोज की मजदूरी पर निर्भर रहने वाले अपने परिवार को अपने पैरों पर खड़ा कर दिया है। इससे उनके परिवार को अन्य चीजों पर भी focus करने का अवसर मिला है। एक बात और हुई है, जैसे ही शकुंतला जी की स्थिति कुछ ठीक हुई, उन्होंने बचत करना भी शुरू कर दिया है। अब वो जीवन बीमा योजनाओं में निवेश करने लगी हैं, ताकि उनके बच्चों का भविष्य भी उज्जवल हो। शकुंतला जी के जज्बे के लिए उनकी जितनी सराहना की जाए वो कम है। भारत के लोग ऐसी ही प्रतिभा से भरे होते हैं - आप, उन्हें अवसर दीजिए और देखिए वे क्या-क्या कमाल कर दिखाते हैं।

मेरे परिवारजनों, दिल्ली में G-20 Summit के दौरान उस दृश्य को भला कौन भूल सकता है, जब कई World Leaders बापू को श्रद्धासुमन अर्पित करने एक साथ राजघाट पहुंचे। यह इस बात का एक बड़ा प्रमाण है कि दुनिया-भर में बापू के विचार आज भी कितने प्रासांगिक है।म ुझेइ सब ातक ेभ ीख ुशीह ैि कग ंधीज यंतीक ो लेकर पूरे देश में स्वच्छता से सम्बंधित बहुत सारे कार्यक्रमों का plan किया गया है। केंद्र सरकार के सभी कार्यालयों में 'स्वच्छता ही सेवा अभियान' काफी जोर-शोर से जारी है। Indian Swachhata League में भी काफी अच्छी भागीदारी देखी जा रही है। आज मैं 'मन की बात' के माधयम से सभी देशवासियों से एक आग्रह भी करना चाहता हूं -1 अक्टूबर यानि रविवार को सुबह 10 बजे स्वच्छता पर एक बड़ा आयोजन होने जा रहा है। आप भी अपना वक्त निकालकर स्वच्छता के जुड़े इस अभियान में अपना हाथ बटाएं। आप अपनी गली, आस-पड़ोस, पार्क, नदी, सरोवर या फिर किसी दूसरे सार्वजनिक स्थल पर इस स्वच्छता अभियान से जुड़ सकते हैं और जहाँ-जहाँ अमृत सरोवर बने हैं वहाँ तो स्वच्छता अवश्य करनी है। स्वच्छता की ये कार्यांजलि ही गांधी जी को सच्ची श्रद्धांजलि होगी। मैं आपको फिर से याद दिलाना चाहूँगा कि इस गाँधी जयंती के अवसर पर खादी का कोई ना कोई Product जरूर खरीदें।

मेरे परिवारजनों, हमारे देश में त्योहारों का season भी शुरू हो चुका है। आप सभी के घर में भी कुछ नया खरीदने की योजना बन रही होगी। कोई इस इंतजार में होगा कि नवरात्र के समय वो अपना शुभ काम शुरू करेगा। उमंग, उत्साह के इस वातावरण में आप vocal for local का मंत्र भी जरुर याद रखें। जहां तक संभव हो, आप, भारत में बने सामानों की खरीदारी करें, भारतीय Product का उपयोग करें और Made in India सामान का ही उपहार दें। आपकी छोटी सी खुशी, किसी दूसरे के परिवार की बहुत बड़ी खुशी का कारण बनेगी। आप, जो भारतीय सामान खरीदेंगे, उसका सीधा फायदा, हमारे श्रमिकों, कामगारों, शिल्पकारों और अन्य विश्वकर्मा भाई-बहनों को मिलेगा। आजकल तो बहुत सारे Start & ups भी स्थानीय Products को बढ़ावा दे रहे हैं। आप स्थानीय चीजें खरीदेंगे तो start & ups के इन युवाओं को भी फायदा होगा।

मेरे प्यारे परिवारजनों, 'मन की बात' में बस आज इतना ही। अगली बार जब आपसे 'मन की बात' में मिलूंगा तो नवरात्रि और दशहरा बीत चुके होंगे। त्योहारों के इस मौसम में आप भी पूरे उत्साह से हर पर्व मनाएँ, आपके परिवार में खुशियां रहें -मेरी यही कामना है। इन पर्वों की आपको बहुत सारी शुभकामनायें। आपसे फिर मुलाकात होगी, और भी नए विषयों के साथ, देशवासियों की नई सफलताओ के साथ। आप, अपने संदेश मुझे जरूर भेजते रहिए, अपने अनुभव शेयर करना ना भूलें। मैं प्रतीक्षा करूँगा।

बहुत बहुत धन्यवाद।

भारतीय परम्परा से वर्तमान तक संवाद की समस्याएँ और सम्भावनाएँ

राधावल्लभ त्रिपाठी

महाभारत के शांतिपर्व (अध्याय 222) में हिमालय निवासी ऋषियों की सभा में हुए एक महाविवाद का प्रसंग बताया गया है। इस वादसभा में छह हजार ऋषि उपस्थित थे। वाद इन प्रश्नों को ले कर हुआ – सृष्टि का स्वरूप क्या है और इसका जन्म कैसे हुआ, कर्म का स्वरूप क्या है? ऋषियों ने इन प्रश्नों पर अलग-अलग मत प्रकट किये,क ुछन ेस ृष्टिक ेस नातनम ाना,क ुछक हनेल गेि कइ सका निर्माण ईश्वर ने किया है, अन्य ईश्वर की सत्ता का निषेध करने लगे। फिर वादी व प्रतिवादियों के बीच वाद विवाद में और विवाद कलह में परिणत हो गया। ऋषिगण जीवन और जगत् के मूलभूत प्रश्नों से जूझते हुए परस्पर जूझने लग गये। वे इतने उत्तेजित थे कि वे वल्कल अजिन व वस्त्र फाड़ने लगे, कमंडलु फोड़ने लगे। अचानक वे शांत हुए। अचानक वे शांत हुए। सबने मिलकर निर्णय किया कि वे अपने प्रश्नों के उत्तर स्वयं नहीं खोज सकते, तो किसी ज्ञानी के पास जा कर उसके सामने अपनी शंकाएँ रखेगें। वे वसिष्ठ के पास गये। वसिष्ठ ने उन्हें सनत्कुमार के पास भेजा।

इस कथा का पूर्वार्ध को आज हमारे जीवन में और सम्पूर्ण विश्व के दृश्यपटल पर चरितार्थ हो रहा है, इसका उत्तरार्ध – वाद और विवाद का संवाद में रूपान्तरित होना और उससे सार्वभौम शान्ति की सम्भावना – अभी चरितार्थ होना बाकी है।

अच्छी और सार्थक बहस की गुंजाइश बनी रहे – यह किसी भी समाज की जीवन्तता की पहचान है, इसके विपरीत निरर्थक बहसों का जारी रहना उसकी रुग्णता का द्योतक हो सकता है। बहस हमारे मानस के बन्द द्वार खोलती है, ज्ञान के नये क्षितिजों का उद्घाटन करती है। सार्थक बौद्धिक बहस किसी भी समाज की जीवनरेखा हुआ करती है। वाद और संवाद समाज के लिये संजीवनीबूटियाँ हैं, उनके बिना समाज मृतप्राय हो जायेगा। वाद और संवाद हमारे भीतर निहित हिंसा के भाव कीअ भिव्यक्तिव उ सकीश ुद्धिक ाभ ीए कम ाध्यमब नतेर हेह ैं। राधाकृष्णन्उ चितह ेक हतेह ैंि कब ौद्धिकि वमर्शक ेस म्भावनाएँ बची रहने के कारण ही भारतीय जन उस दारुण नियति से शिकार नहीं हुए, जिसे प्लेटो ने तर्क के प्रति घृणा के रूप में परिभाषित किया है।

पारम्परिक भारतीय प्रज्ञा की दो दृष्टियाँ रही हैं – एक अनेकत्व में एकत्व का दर्शन करती है तो दूसरी एक के बहुलीभवन का सन्धान करती है। हम एक को अनेक के रूप में व्याख्यान भी करते हैं और उन अनेकों का पुनःए कम ेंस माहारक रतेह ैं। बहुलता हमें विकल्प और स्वातंत्र्य प्रदान करती है, विकल्पबाहुल्य संवाद की गुंजाइश यह अवकाश बनाता है।

मधयकाल में सन्तों की परम्परा तथा भक्तिकाल के सन्दर्भो के बीत संवाद के लिये एक बहुत सुन्दर शब्द प्रचलित हुआ – सत्संग। इस पर संवाद की विकास यात्रा पर चर्चा करते हुए विचार करेंगे।

दबिस्ताने–मजाहिब के अज्ञात लेखक ने हिंदुओं की पहचान ही यह बताई है कि वे एक दूसरे से लगातार बहस करने वाले लोग हैं। संस्कृत के पण्डितों के बीच यह कहावत प्रचलित है कि 'वादे वादे जायते तत्त्वबोध:' – लगातार बहस करते जाने से तत्त्वज्ञान तक पहुँचा जा सकता है। 'वाद' शब्द का प्रयोग ऐसी रचनात्मक चर्चा तथा बहस के अर्थ में किया गया है, जिसकी परिणति संवाद में हो।

वाद की दो परिणतियाँ हो सकती हैं विवाद और संवाद। वाद विवाद में न ढले, संवाद में ढले – इसके लिये प्रत्येक समाज को और विशेषतया उसके स्वतन्त्रचेता विचारकों को एक पद्धति और जीवनचर्या विकसित करनी चाहिये।

पारम्परिक भारतीय प्रज्ञा की दो दृष्टियाँ रही हैं – एक अनेकत्व में एकत्व का दर्शन करती है तो दूसरी एक के बहुलीभवन का सन्धान करती है। हम एक को अनेक के रूप में व्याख्यान भी करते हैं और उन अनेकों का पुन: एक में समाहार करते हैं। बहुलता हमें विकल्प और स्वातंत्र्य प्रदान करती है, विकल्पबाहुल्य संवाद की गुंजाइश यह अवकाश बनाता है। वह एकाधिपत्य तथा एकतन्त्रीयता को तोड़ कर अनन्त की यात्रा पर ले जाती है। बहुलीभवन एक की अपेक्षा रखता है, एक है तभी बहुल हो सकता है। एक अपने को अनेकों में बिखेर देता है। इस बहुलता को पेड़ के दृष्टान्त से समझा जा सकता है। पेड़ एक है, उसका मूल एक है। उस मूल से अनेक शाखाएँ फूटती हैं। एक एक शाखा में कई–कई पत्तियाँ आती हैं। फूल आते हैं। हर फूल का एक वृन्त या बन्ध होता है। उसमें पंखुड़िया फूटती हैं। पंखुड़ियाँ बाद में आती है, केन्द्र जहाँ से पंखुड़ियाँ फूटती हैं, पहले है। पंखुड़ियों का एक केन्द्र है। पंखुड़ियों से उसका सम्बन्ध केन्द्रापसारी दृष्टि से भी प्रतिपादित हो सकता है और केन्द्राभिमुख दृष्टि से भी। बहुलता में एकता का सन्धान स्वत:सिद्ध और प्रत्यक्षगम्य होता है।

हम एक को अनेक के रूप में व्याख्यान भी करते हैं और उन अनेकों का पुन: एक में समाहार करते हैं। बहुलता हमें विकल्प और स्वातन्त्र्य प्रदान करती है, एक विकल्प का बचा रह जाना, एकतन्त्रात्मक हो जाना अधिनायकतावाद का विकास होना संवाद को खतम करता है, विकल्पबाहुल्य संवाद का अवकाश निर्मित करता है। वाद या सार्थक सकारात्मक बहस विकल्पबाहुल्य को रचती जाती है, संवाद में इस वाद की परिणत विकल्पों में सामंजस्य स्थापित करती है। यह भाषाओं और ज्ञानपरम्पराओं के स्वस्थ सहज विकास के लिये अपेक्षित है। हमारे देश में यह बहुभाषिकता तथा बहुभाषिक संवादों में प्रतिफलित होती आई है।

केन्द्राभिमुखी या मूलानुसारिणी दृष्टि भी बनी रहे और मूल के प्रसार – शाखा–प्रशाखाओं का परिशीलन भी होता रहे – यह भाषाओं और ज्ञानपरम्पराओं के स्वस्थ सहज विकास के लिये अपेक्षित है। हमारे देश में यह बहुभाषिकता तथा बहुभाषिक संवादों में प्रतिफलित होती आई है।

गौतम ने अपने न्यायसूत्र में कथा (बातचीत) के तीन प्रकार बताये हैं – वाद (बौद्धिक विमर्श के साथ बातचीत), जल्प (बहस) और वितंडा (एकपक्षीय बहस)।

भारतीय दर्शनों की परम्परा में वाद एक सुपरिभाषित कोटि के रूप में स्वीकृत है, जिसके तीन अर्थ मान्य रहे हैं – चर्चा, विवाद तथा संवाद। आगे चल कर वाद का एक अर्थ सिद्धान्त(थ्योरी) भी लिया गया।

वाद और विवाद में मूलभूत तात्त्विक अंतर समझा जाना चाहिये। विवाद की परिणति संवाद में नहीं हो सकती, वाद की परिणति अनिवार्यत: संवाद में होती है। यह सत्य है कि वाद रहेगा, तो विवाद कहीं न कहीं से उसका सहयात्री हो जाता है। विवाद से कटुता उत्पन्न होती है, सागर को मथने पर हालाहल भी उत्पन्न हुआ और अमृत भी। विचारसागर का मंथन करने पर वाद और विवाद दोनों जन्म लेते हैं।

सारे वादों की संवाद में परिणति की अनिवार्य मूलभूत शर्त आन्तरिक संवाद की पूर्वोपस्थिति है। संवाद के दो रूप हैं – आभ्यंतर और बाह्य। दोनों एक दूसरे से जुड़े हैं,

आभ्यंतर संवाद के के बिना बाह्य संवाद संभव नहीं। आभ्यंतर संवाद होने पर बाह्यसंवाद स्वत: होने लगता है। बिना वैखरी के ही पश्यंती के स्तर पर विचारों का संप्रेषण हो जाता है।

वाद तथा संवाद दोनों एक से अधिक व्यक्तियों के बीच ही हो सकते हैं। अंत:संवाद की दशा में भी व्यक्ति अपनी ही चेतना को दो व्यक्तित्वों में बाँट लेता है, जिससे वाद और संवाद संभाव्य हो पाता है। उसमें अंतर्मुखी तथा बहिर्मुखी प्रवृत्तियों का विलक्षण समवाय होता है। उसके चित्त की निर्मलता लोगों को संवाद के लिये स्फूर्ति देती है। संवादपुरुष सभी नहीं हो सकते, उसके लिये एक अलग तरह की प्रतिभा चाहिये। इतिहास में एक से एक बढ़ कर ज्ञानी जन और विचारक हुए हैं, वे वाद पुरुष हो सके, पर वे सभी संवाद पुरुष नहीं बन सके।

कुल मिला कर भारत में अनादि काल से वाद या बहस की सम्पन्न परम्परा विकसित होती रही है।

यह मानना गलत होगा कि क्या वाद (बहस, संवाद तथा चर्चा) के लिये अवकाश बना रहने के कारण भारतीय परम्परा में द्वन्द्व कम और सामंजस्य की प्रवृत्तियाँ अधिक पनपीं? वाद की उपस्थिति विरोध और असहमति को सम्भाव्य बनाती है और संवाद के लिये भी अवकाश रचती है।

ऐतिहासिक दृष्टि से भारत में वादशास्त्र और संवादशास्त्र के सैद्धान्तिक और व्यावहारिक विकास को चार चरणों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम चरण लगभग तीन हजार वर्ष ईसापूर्व से लगा कर 600 वर्ष ईसापूर्व के आसपास तक फैला है। वैदिक काल से लगा कर महावीर और बुद्ध के अवतरण के पहले का जितना कई सहस्राब्दियों में विस्तृत कालखण्ड इसमें समाविष्ट है। वादशास्त्र और संवादशास्त्र के सिद्धान्त और व्यवहार के विकास का यह आरम्भिक काल है। द्वितीय चरण 600 ईसापूर्व से लगा कर लगभग 500 ई. तक की एक सहस्राब्दीक ाम ानाज ास कताह ै।इ तिहासक ीद ृष्टिस े इसमें बुद्ध और महावीर के अवतरण के साथ मौर्यकाल, अशोक के साम्राज्य का काल और गुप्तकाल समाविष्ट हो जाते हैं। वाद की सैद्धान्तिकी या थ्योरी के व्यवस्थापन का यह सबसे उर्वर काल है। तृतीय चरण में 500 ई. से लगभग अठारहवीं शताब्दी तक वाद और संवाद का सातत्य अपनी विपुलता और वैविध्य के प्रकर्ष पर है। एक सहस्राब्दी से ज्यादा अवधि में विस्तृत इस काल में इतिहास का मध्यकाल मुगलसाम्राज्य के विस्तार का काल समाविष्ट है। चतुर्थ चरण उन्नीसवीं शताब्दी से लगा कर अब तक का

आधुनिक काल है, वाद की नई संभावनाएँ इसमें अभी भी परखी जानीं हैं।

वाद और संवाद की विकास यात्रा भारत में इन चार प्रमुख पड़ावों से गुजरी। इन्हें मन्त्रकाल, भाष्यकाल या तर्ककाल, विस्तारकाल तथा आधुनिककाल भी कह सकते हैं।

प्रथम चरण – मन्त्रकाल

प्रश्न और शंका उठाने की प्रवृत्ति के सबसे प्राचीन उदाहरण वैदिक सूक्तों में देखे जा सकते हैं। इन्द्र वैदिक देवमण्डलम ेंस र्वाधिकम हिमामण्डितद ेवह ैं,प रउ नके माहात्म्य का ऊर्जस्वीगान करने वाले सूक्तों में ही यह भी कहा गया है – 'इन्द्र, कुछ लोग हैं, जो तुम्हारे अस्तित्व पर शंका करते हैं, वे पूछते हैं कि इन्द्र हैं कहाँ? फिर वे कहते हैं कि इन्द्र है ही नहीं। अनेक सूक्तों में सृष्टि के मूलभूत तत्त्व के विषय में जिज्ञासा और प्रश्न उठाये गये हैं। ऋषि पूछते हैं – 'वह कौन सा वन था और कौन वृक्ष जिसके काठ से यह धरती बनाई गई?' नासदीय सूक्त में तो सृष्टि के रहस्य पर तरह तरह की विचिकित्सा करते हुए ऋषि यह भी कहते हैं – 'यह सृष्टि कैसे और किससे उत्पन्न हुई – यह तो देवता भी नहीं जानते, क्योंकि वे सृष्टि के होने के बाद के हैं, और परमव्योम में इस सृष्टि का कोई अधिष्ठाता है, तो क्या पता वह भी इसके रहस्य को जानता है या नहीं जानता है!'

वैदिक काल में प्रशासन व सामाजिक समस्याओं पर विमर्श और निर्णय के लिये सभा तथा समिति ये दो संस्थान सक्रिय थे, जिनके उल्लेख अनेकत्र मिलते हैं। सभा में उपस्थित प्रतिभागी सभ्य कहलाते हैं। स्पष्ट है कि सभा में सारा व्यवहार शिष्टजनोचित या सभ्य लोगों के अनुरूप होना चाहिये। वैदिक वाङ्मय में सभा को नरिष्ठा कहा गया है। नरिष्ठा का अर्थ है जिसमें श्रेष्ठ जनों की उपस्थिति हो। सातवलेकर ने इस आधार पर आधुनिक संसदीय प्रणाली का अस्तित्व वैदिक काल में सिद्ध किया।

इसी चरण में ब्रह्मोद्यनाम से एक अत्यन्त गतिशील संस्था का विकास हुआ, जिसमें ब्रह्मज्ञानी लोगों के बीच वाद और संवाद होता था।

द्वितीय चरण

ईसा के पहले की पाँच और ईसा के बाद से ईसा दसवीं शताब्दी तक डेढ़ हजार वर्षों में विस्तृत इस चरण में वाद और संवाद की सैद्धान्तिकी पूरी तरह से व्यवस्थित कर दी गई, तथा वाद में तर्क की प्रखरता अधिक आ गई। अन्तर्दृष्टि के स्थान पर तर्क की धार अब ब्रह्मोद्यों या ब्रह्मसभाओं में आने लगी होगी।

700 ईसापूर्व या उसके पहले रचे अपने निरुक्त के अन्त में दी गई एक कथा में यास्क ने इस स्थिति का संकेत दिया है। कथा यह है – ऋषि संसार छोड़ कर जा रहे थे। मनुष्यों ने उनसे पूछा – 'आप लोग यदि जा रहे हैं, तो फिर हमारा ऋषि कौन होगा?' ऋषियों ने कहा – 'अब से तर्क तुम्हारा ऋषि होगा।'

वस्तुतः ईसा की पहली सहस्राब्दी शास्त्रपरम्पराओं केर् विकासक ीद ृष्टिस ेस बसेस ंपन्नक ालह ै।भ र्तृहरि, नागार्जुन, धर्मकीर्ति जैसे श्रेष्ठ विचारक इसमें हुए। यह कुमारिल, शंकर, मंडन मिश्र और उदयन जैसे दिग्गज दार्शनिकों का समय है, यह वह समय है जब संस्कृत की सारी शास्त्रपरम्पराएँ अपने को तरोताजा कर कर रहीं हैं – नव्यवेदान्त है, नव्य व्याकरण है, नव्यन्याय हैय और मीमांसा में भी काफी कुछ नया हैय कुमारिल और प्रभाकर का दर्शन हैय मुरारि मिश्र का तीसरा मार्ग है।

वैदिक काल के पश्चात् सभा एक संस्था के रूप में फलती फूलती रही। कहीं कहीं इसका नाम परिषद् या अभिरूपभूयिष्ठा परिषद् भी मिलता है। राजशेखर ने सभा तथा सभाभवन का विस्तार से वर्णन किया है। वात्स्यायन ने अपने कामसूत्र में सभाभवन के स्थान पर सरस्वतीभवन – इस संज्ञा का प्रयोग करते हुए बताया है कि हर नगर में एक सरस्वती भवन होना चाहिये, जिसमें महीने या पखवाड़े की नियत तिथि पर समाज का आयोजन हो। समाज का अर्थ ऐसी बैठक से है, जिसमें परस्पर चर्चा, गोष्ठी या गीत–संगीत आदि का आयोजन होता है।

प्राच्य विद्या का विकासत था उसके माध्यम से भारतीय प्रज्ञा के वैश्विक संवाद की आधार भूमि जिन ग्रंथों से बनी उनमें पंचतन्त्र, उपनिषद्, तथा भगवद्गीता सर्वप्रथम उल्लेखनीय हैं । इस काल में भी पंचतन्त्र और

उपनिषद् से विश्व का परिचय शताब्दियों तक मूलग्रंथों के द्वारा नहीं, उनके अनुवादों तथा अनुवादों के भी अनुवादों से होता रहा। पंचतन्त्र का पहला अनुवाद पहलवी भाषा में अरब के बादशाह नौशेरवाँ ने छठी शताब्दी में कराया। यह अनुवाद ही फारसी, लैटिन, इटालियन आदि भाषाओं में पुनरनूदित होकर भारतीय कथा के वैश्विक प्रसारत था उसके माध्यम से विश्व संस्कृति में भारत के अवदान का प्रभावी माध्यम बना।

तृतीय चरण

वाद और संवाद के इतिहास का तृतीय चरण ग्याहवीं शताब्दी से आरम्भ होता है। इस काल में भारत में रामानुज, माधव, निम्बार्क, रामानन्द, वल्लभ आदि महान् विचारक हुए, सन्तों ने संवाद की एक अलग प्रणाली अपनाई तथा भक्तिकाल के साहित्य में धर्मों और सम्प्रदायों में नये सेतुओं का निर्माण किया।

संवाद के लिये ही योगवासिष्ठ में सत्सङ्ग शब्द का प्रयोग हुआ है। वसिष्ठ कहते हैं।

वेदान्तदेशिक ने शतदूषणी में शाङ्करवेदान्त का प्रबल खण्डन किया। इस ग्रन्थ के द्वारा एक लम्बी परम्परा शाङ्कर और रामानुज वेदान्तों में वाद, विवाद और संवाद की प्रक्रान्त हुई जो बींसवीं शताब्दी तक निरन्तर चलती रही। वेदान्तदेशिक ने 115 ग्रन्थ लिखे, जिनमें साठ संस्कृत में हैं, शेष द्विभाषिक (संस्कृत तथा तमिल दो भाषाओं में) या मणिप्रवाल शैली में बहुभाषिकता।

सत्रहवीं शताब्दी में अप्पय दीक्षित ने मध्वतन्त्रमुखमर्दनम् नामक ग्रन्थ में माध्वमत का प्रबल तर्कों के आधार पर ध्वंस किया। अप्पय दीक्षित ने ब्रह्मसूत्र के सूत्रों पर इसके साथ अद्वैतपरक दृष्टि से विशद विचार भी किया और भेदवाद का निरास किया।

इस्लाम से जुड़ी परम्पराओं – विशेषत: सूफी मत के साथ भारतीय विचारधाराओं का संवाद इस काल में खूब हुआ। सन्त एकनाथ ने तो तुर्क-हिन्दू-विवाद जैसे काव्य लिख कर वाद विवाद के साथ संवाद की स्थापना का महनीय कार्य किया। अल्लोपनिषत् जैसा नया उपनिषद् संस्कृत में इस काल में लिखा गया। प्रताप कुमार मिश्र तथा अन्य कई विद्वान् मानते हैं कि अल्लोपनिषद् के प्रणेता अबुल फज्ल थे। इसकी कुछ पोथियों पर भी लेखक के रूप में अबुल फज्ल का नाम है। अकबर के भीतर हिंदू परम्परा को लेकर न केवल गहरी आस्था और सतत जिज्ञासा बनी रही, उसने हिंदू समाज को चैतन्य करने के लिये भी हस्तक्षेप किये।

दाराशुकोह के द्वारा फारसी में सिर्रे-अकबर के नाम से अनूदित 52 उपनिषदों के अनुवाद की है। दाराशुकोह के उपनिषदों के लैटिन में अनुवाद फ्रांस के विद्वान एंकेटिलदुपेरों (Anquetil Duperon) ने किये जो Oupnekhat शीर्षक से पेरिस से 1801-02 में दो खण्डों में छपे। इन अनुवादों का अंशत: अनुवाद जर्मन भाषा में 1808 ई. में रिक्सनेर (Th. A. Rixner) नामक विद्वानों ने किया। लेटिन तथा जर्मन में उपनिषदों के ये रूपान्तर शापेनहार तथा शेलिंग जैसे उन्नीसवीं शताब्दी में दार्शनिकों के द्वारा पढ़े गये। शापेनहार ने उपनिषदों को सर्वोच्च मानवीय प्रज्ञा की परिणति (the product of the highest human wisdom) बताया। वे उपनिषदों के तत्त्व चिन्तन पर इतने मुग्ध थे किएंकेटिलदुपेरोंके Oupnekhat को नित्य सिरहाने रखकर सोते थे। शोपेनहार का उपनिषदों के विषय में यह कथन बहुश:उद्धृत होता आया है -- उपनिषद् से बढ़कर संसार में और कोई पुस्तक नहीं है, जिसके पढ़ने से आत्मा को ऐसी गहन शान्ति मिल सके, उपनिषद् मेरे जीवन के लिये परम विश्राम रहे हैं, और मृत्युपर्यन्त रहेगें। ("There is no other book in the whole world, the reading of which is as rewarding and solemn, as that of this book, it has comforted me in my life and it will also comfort me while dying-")

सत्रहवीं शताब्दी में अप्पय दीक्षित ने मध्वतन्त्रमुखमर्दनम् नामक ग्रन्थ में माध्वमत का प्रबल तर्कों के आधार पर ध्वंस किया। अप्पय दीक्षित ने ब्रह्मसूत्र के सूत्रों पर इसके साथ अद्वैतपरक दृष्टि से विशद विचार भी किया और भेदवाद का निरास किया। इस्लाम से जुड़ी परम्पराओं - विशेषत: सूफी मत के साथ भारतीय विचारधाराओं का संवाद इस काल में खूब हुआ। सन्त एकनाथ ने तो तुर्क-हिन्दू-विवाद जैसे काव्य लिख कर वाद विवाद के साथ संवाद की स्थापना का महनीय कार्य किया।

चतुर्थ चरण

वाद और संवाद की परंराओं के चतुर्थ चरण में वह समय भी समाहित है, जिसमें हम यह सारी चर्चा कर रहे हैं। उन्नीसवीं और बींसवीं शताब्दियों तो इन वाद और संवाद की की अभूतपूर्व सम्भावनाएँ और समस्याएँ ले कर आई। जितना वाद और संवाद इन दो शताब्दियों में वैश्विक स्तर पर हुआ और अब इक्कीसवीं शताब्दी में हो रहा है, वह उतना विश्व सभ्यता के इतिहास में इसके पहले कई हजार वर्षों में भी नहीं हुआ। जितनी बड़ी संख्या में वादपुरुषअ ौरस ंवादपुरुषइ नद ोश ाताब्दियोंम ंे ह ुएउ तने कदाचित् विश्व के इतिहास पहले नहीं हुए। यदि नाम गिनाने लगें, तो हजार से अधिक महान् चिंतकों, संतों, रहस्यदर्शियों के नाम बताये जा सकते हैं, जिनके द्वारा उठाये गये वादों तथा संवादों से संसार का परिदृश्य ही बदलता गया है। रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद, रवींद्र नाथ, जे. कृष्णमूर्ति, एनी बीसेंट, स्वामी दयानन्द, केशवचंद्र सेन, राजा राममोहन राय, महात्मा गाधी, विनोबा भावे, जे. कृष्णमूर्ति, ज्योति बा फुले, रमा बाई, स्वामी करपात्री, ओशो रजनीश, आनंदकुमार स्वामी, राहुल सांकृत्यायन, भारतेंदु हरिश्चंद्र, राम मनोहर लोहिया, हजारीप्रसाद द्विवेदी, विद्यानिवास मिश्र आदि के नाम उपलक्षण स्वरूप गिनाये जा सकते हैं।

इस काल में वाद और संवाद का अभूतपूर्व लोकतंत्रीकरणह ुआह ै।अ ाधुनिकस ंचारम ाध्यमोंन ंे इ न दोनों को अपूर्व विस्तार दिया है। यह सत्य है कि वाद और संवादक ेह मारेस मयम ंे अ नेकअ नोखीप्र क्रियाएँअ ौर तन्त्र विकसित हुए, उनमें विकृतियाँ, अविनय और दुराग्रह भी बहुत प्रकट हुए हैं।

हमारेस मयम ंे व ैश्विकस ंवाद ि वभिन्नस ंस्कृतियों और सभ्यताओं के बीच वाद और संवाद के रूप में होने लगा। अल्बर्ट श्वात्जड़र ने अपने ग्रंथ Indian Thought and its Development)(1939) में भारतीय मनीषा को ले कर जो दुराग्रह व्यक्त किया था, सर्वेपल्ली राधाकृष्णन् ने इसी वर्ष प्रकाशित अपने ग्रंथ Eastern Religion and Western Thought में उसका समुचित प्रतिवाद किया। श्रवाइत्जडर ने कहा था कि भारतीय दर्शन पलायनवादी है। इसी प्रकार राधाकृष्णन् ने दार्शनिक बर्गसाँ के मत का भी प्रतिवाद किया।

राधाकृष्णन् उचित ही कहते हैं कि बौद्धिक विमर्श की सम्भावनाएँ बची रहने के कारण ही भारतीय जन उस दारुण नियति से शिकार नहीं हुए, जिसे प्लेटो ने तर्क के प्रति घृणा के रूप में परिभाषित किया है।

इस सब के होते हुए भी देश के तत्त्वदर्शी ऋषि, ज्ञानी और विचारक संवाद की मुश्किलों का अनुभव करते आये हैं। महाभारत में व्यास कहते हैं कि मैं दोनों हाथ ऊपर उठा कर चीख रहा हूँ और कोई मेरी नहीं सुनता। बद्ध अपने उपदेशों में संवाद करना क्यों मुश्किल है इस सवाल की गहरी पड़ताल करते हैं। इन मुश्किलों के हल के लिये हमारे विचारक अलग अलग प्रणालियाँ विकसित करते रहे हैं। इन मुश्किलों से निपटते हुए हमारे ज्ञानी जन संवादपुरुष बन सके।

संवादशील मानस का व्यक्ति बातचीत के लिये अपने द्वार सदा खुले रखता है, वह खुले में बहस से घबराता नहीं है, जनसमाज के सामने निहत्था जा कर बात कर सकता है, संवादशीलता उसे निर्भय बना देती है।

संवादशील मानस की निर्मिति के लिये दूसरी शर्त यह है कि व्यक्ति का अपना चित्त नितान्त निर्मल हो। वह अपने भीतर झाँक कर देख सके, अपनी टोह ले सके, अपने आप से संवाद कर सके। उसके साथ ही उसमें पर्यवेक्षण की प्रतिभा हो, वह सामने वाले आदमी को भाँप सके, उसके चित्त को नाप सके। संवादशील मानस के लिये व्यक्ति का बहिर्मुखी होना आवश्यक नहीं है, बहिर्मुखी व्यक्ति स्वयं के बारे में बड़बड़ करता रह सकता है, वह दूसरे की सुनना नहीं चाहता। संवादशील हो सकने के लिये जरूरी है कि व्यक्ति दूसरे की पहले सुने। वेदान्त में श्रवण को मुक्ति की पहली सीढ़ी माना गया है। श्रवण एक आन्तरिक गुण है, तो साधना से अर्जित किया जा सकता है। हम लोग बाहर के कानों से ज्यादा सुनते हैं, आत्मा के भीतर जो श्रवणेन्द्रिय है, उससे कम। अन्तर्मुखी व्यक्ति यदि कम बोलता है, तब भी उसकी अन्तःप्रज्ञा तथा अकलुष चित्त के कारण लोग उसे अपने मन की बात बताने के लिये तत्पर हो सकते हैं।

आज जब विश्व में संवाद बार बार टूट रहा हो, संवादमार्ग विचार्य और अंगीकार्य हो जाता है। भारत के जिन मनीषियों ने संवाद की मुश्किलों क सामने करते हुए

वैचारिक,स ांस्कृतिकअ ौरभ ावनात्मकए ेक्यक ेस ूत्रोंम ें एक देश को पिरोया नमें से अगस्त्य, अभिनवगुप्त, अकबर, दाराशुकोह, गांधी और विनोबा की चर्चा हम करेंगे।

अगस्त्य

अगस्त्य के सामने दुर्गम विन्ध्य था। विन्ध्य को आर्यावर्त की सीमा बताया जाता था। अगस्त्य इस सीमा को तोड़ते हैं। वैदिक काल में ही कहीं हमारे उत्तरभारत के समाज में यह विचार पनप गया था कि हिमालय से विन्ध्याचल आर्यों का क्षेत्र है उसके नीचे दक्षिण में रहने वाले लोग हेय हैं। यह अभिमान था। विन्ध्य इस अभिमान को प्रहरी बन कर ऊँचा होता चला जा रहा था। उसके ऊँचे होने से देवता तक घबरा गये थे। अगस्त्य इस अभिमान तो तोड़ते हैं। उन्होंने अगस्त्य ने विंध्याचल से अनुरोधा किया कि तुम झुक जाओ ताकि हमें उत्तर से दक्षिण जा सकें। अगस्त्य ने उत्तर और दक्षिण के बीच जैसा संवाद स्थापित किया, उसे कितनी बार तोड़ा गया, पर अगस्त्य ने संवाद के तार कुछ इस तरह ऐसे जोड़ दिये इतिहास और राजनीति उन्हें कितना ही तोड़े, वे बार-बार तोड़े जाकर फिर फिर जुड़ जाते हैं।

अगस्त्य के दक्षिण में पहुँचने के साथ तमिल भाषा तथा तमिल संस्कृति से उत्तर भारत का सार्थक संवाद आरम्भ होता है। संस्कृत साहित्य में अगस्त्य का चरित्र जिस प्रकार रामायण, महाभारत पुराणों तथा महाकाव्यों में निरूपित है, उसी प्रकार तमिल साहित्य में भी अगस्त्य एक महनीय विभूति के रूप में वर्णित हैं। तोलकाप्यम्तमिल का सर्वप्राचीन व्याकरण तथा साहित्यशास्त्र का ग्रंथ है। इसके प्रणेता तोलकाप्य अगस्त्य के बारह शिष्यों में से एक थे। अगस्त्य के द्वारा विरचित व्याकरण का ग्रंथ अगत्तियम् के नाम से उल्लिखित है, जो अप्राप्य है। तोलकाप्य ने भाषा तथा काव्य के इलक्कणम् (लक्षणों) का निरूपण किया है। काव्य के इन्होने दो पक्ष माने हैं - अहम् (वैयक्तिक) तथा पुरम् (बाह्य)। तोलकाप्यम् में काप्यम् का अर्थ काव्यम् है। यह ग्रंथ प्रथम शताब्दी ई.पू. से प्रथम शताब्दी ई. के मधय रचा गया ऐसा माना जाता है। इसमें वेदों व धर्मशास्त्र का उल्लेख है, अर्थशास्त्र में उल्लिखित 32 तंत्र युक्तियों से तोलकाप्यकार परिचित हैं। सूत्रशैली से वे परिचय प्रकट करते हैं। यास्क के निरुक्त से भी तो लकाप्यकार प्रभावित लगते हैं। तीसरे अतिकारम् (अधिाकार) में उन्होंने नाटङशास्त्र विषययक प्राचीन ग्रंथ से परिचय प्रकट करते हुए आठरसों, उनके स्थायी भावों 32 व्यभिचारी भावों थाविभाव,अनुभाव आदि का भी वर्णन किया है। विष्णु, सुब्रह्मण्य (स्कंदयामुरुकन), इंद्र, वरुण आदि देवों का तोलकाप्यम् में उल्लेख है। जिन नाटङप्रकारोंक ास ंकेतइ सग ंथम ें िकयाग याह ै,उ नमें गीत और नृत्य की प्रचुरता प्रतीत होती है। यह भरतमुनि के दाक्षिणात्या प्रवृत्ति के निरूपण का समर्थन होता है, जिसमें उन्होंने दाक्षिणात्या प्रवृत्ति को बहुनृत्तगीतयुक्त बताया है।

अगस्त्य भारत की बहुविधा संस्कृतियों के बीच संवाद के एक बड़े प्रतीक हैं। अगस्त्य के सम्बन्ध पुराणों में अनेक कथाएँ हैं। स्कन्दपुराण में कथा है कि शिव का विवाह हुआ, तो चराचर जगत् उसमें सम्मिलित हुआ। विवाह में ऐसा जमावड़ा हुआ भूतगणों, देवों असुरों समस्त जगत् का कि उसके भार से पृथ्वी का उत्तर का कोना दब गया, केरल का कोना दक्षिण का भाग ऊपर उठ गया। मनुष्यों को तो पृथ्वी के इस असन्तुलन से कोई अन्तर नहीं पड़ा। देवताओं के लिये अंतर हो गया। देवता चिन्तित होते हैं जब धरती का पर्यावरण नष्ट होता है या उसका सन्तुलन भंग होता है। देवता विष्णु के पास गये और उनसे निवेदन किया कि धरती एक तरु से झुक गई है, इसे फिर से समतल कर दीजिये। विष्णु ने कहा कि इतने से काम के लिये मुझ से क्यों कहते हो, इसको तो अगस्त्य ही कर देंगे। अगस्त्य ने जिन्होंने विन्ध्य को चपटा कर दिया है, धरती को भी दबा कर फिर से बराबर कर देंगे। अगस्त्य विन्ध्य को पार कर के दक्षिण में ही जा बसे थे। उन्होंने मलयगिरि पर अपना आश्रम बना लिया था। अगस्त्य से प्रार्थना की गई कि आप धरती के दाहिने छोर पर जा कर उसको दबाइये, धरतीक ेि फरस ेस मतलब नाइये।अ गस्त्यग ये,उ न्होंने धरती के दोनों छोर बराबरी पर ला दिये। वहीं एक वैष्णव मन्दिर था। अगस्त्य उसमें दर्शन के लिये पहुँच गये। मन्दिर के पुजारियों के देखा कि उनके माथे पर त्रिपुण्ड लगा है, अर्थात् वे शैव है, तो उन्होंने द्वार पर रोक दिया, कहा कि हमारे मन्दिर में शिव की पूजा करने वाले कैसे आ सकते हैं। अगस्त्य ने तुरंत अपनी योगमाया से माथे पर के त्रिपुण्ड

को वैष्णव तिलक में रूपान्तरित कर दिया, और कहा कि मैं वैष्णव हूँ। उन्हें मन्दिर में प्रवेश करने दिया गया। अगस्त्य मन्दिर में गर्भगृह में पहुँचे जहाँ विष्णु का प्रतिमा स्थापित थी। अगस्त्य जैसे ही प्रतिमा के सामने पहुँचे वह शिव की प्रतिमा बन गई। पुजारी देखते रह गये कि अभी तक जो विष्णु थे, वे शिव कैसे बन गये हैं।

सीलप्पदिकारम् तथा मणिमैखलै इन दो महाकाव्यों का तमिल साहित्य में वही स्थान है, जो संस्कृत साहित्य में रामायण तथा महाभारत का। सीलप्पदिकारम् पर वैदिक साहित्य से संवाद है। इसकी एक नायिका माधवी को इंद्र के पुत्र जयंत और उर्वशी की संतान बताया गया है। सीलप्दकारम् के छठे सर्ग में एक अन्य प्रसंग माधावी के जन्म का आता है, जिसमे अगस्त्य ऋषि के शाप से उर्वशी ही माधावी के रूप में जन्म लेती है यह बताया गया है

परस्पर विरोधी विचारों में सामंजस्य स्थापना बुद्ध की प्रवचनपति की एक बड़ी विशेषता है। विविध विरुद्धों के बीच सामंजस्य के उद्घाटन करने के लिये उन्होंने तर्क और वाद और संवाद की एक अनोखी पद्धति अपनाई। उनका कहना था कि वे ऐसे सिद्धांतों का प्रतिपादन भी करते हैं, जो एकांशिक हैं, तथा ऐसे सिद्धांतों का भी जो अनेकांशिक हैं। आचार्य बी. के. मतिलाल (1981:6) का मानना है कि बुद्ध की अनेकांशिक की अवधारणा ही आगे चल कर जैन दर्शन के प्रसिद्ध बहुलतावादी सिद्धान्त या अनेकांतवाद की पीठिका बनी।

बुद्ध

बुद्ध इस तथ्य के जागरित निदर्शन हैं कि संवाद के द्वारा आंतरिक लोकतन्त्र विकसित किया जा सकता है। उनकी सारी जीवन यात्रा संवादशील मानस बनने के लिये किये गये संघर्ष की यात्रा है। सिद्धार्थ से बुद्ध बनने की प्रक्रिया वाद को संवाद में परिणत कपरने की प्रक्रिया ही थी। लिच्छिवि और वैशाली गणतन्त्र पानी के ले आपस में झगड़ रहे थे और दोनों में युद्ध होने की सम्भावना थी। सिद्धार्थ ने कहा कि मिल बैठ कर बातचीत कर के इस समस्या को सुलझाया जा सकता है, पर दोनों के संकुचित स्वार्थ और अहंकार आड़े आ गये, सिद्धार्थ की उन्होंने एक न सुनी। वाद को संवाद मे परिणत न कर पाने की विफलता ने ही सिद्धार्थ को इस विफलता से उबरने के लिये महाभिनिष्क्रमण के लिये प्रेरित किया।

परस्पर विरोधी विचारों में सामंजस्य स्थापना बुद्ध की प्रवचनपति की एक बड़ी विशेषता है। विविध विरुद्धों के बीच सामंजस्य के उद्घाटन करने के लिये उन्होंने तर्क और वाद और संवाद की एक अनोखी पद्धति अपनाई। उनका कहना था कि वे ऐसे सिद्धांतों का प्रतिपादन भी करते हैं, जो एकांशिक हैं, तथा ऐसे सिद्धांतों का भी जो अनेकांशिक हैं। आचार्य बी.के. मतिलाल (1981:6) का मानना है कि बुद्ध की अनेकांशिक की अवधारणा ही आगे चलक रजनैद र्शनक प्र सिद्धब हुलतावादी सद्धान्तय ा अनेकांतवाद की पीठिका बनी। मज्झिमनिकाय (सुत्त 99 में बुद्ध कहते हैं कि मैं एकांतवादी नहीं हूँ, मैं विभज्यवादी हूँ। विभज्यवाद के द्वारा बुद्ध ने विरुद्धों के बीच सामंजस्य की पद्धति अनोखी विकसित की। विभज्यवाद किसी भी सिद्धान्त को विविधा कोटियों में विभाजित कर के उनकी आपेक्षिक सत्यता व आपेक्षिक असत्यता की जाँच की जाती है।

अपनी तर्कपद्धति के द्वारा बुद्ध ने समस्त दार्शनिक प्रश्नों की निम्नलिखित कोटियाँ स्वीकार कीं – एकांशव्याकरणीय (जिनकी एक अंश में पहचान सत्य या असत्य के रूप में की जा सके), विभज्यवादेन व्याकरणीय (जिनकी पहचान विभाजित कर के परीक्षण के द्वारा संभव हो), प्रतिप्रश्नेन व्याकरणीय (जिनकी पहचान उठाये गये प्रश्न के ऊपर प्रतिप्रश्न कर के की जा सके); तथा स्थापनीय (जिनके विषय में मौन रहना ही उचित हो अथवा जिन्हें तत्काल विचारणीय न माना जाये)।

ये सारी विचारपद्धतियाँ बुद्ध के मध्यमाप्रतिपद् के सिद्धान्त के अनुरूप हैं। मध्यमा प्रतिपत् में किसी भी अवधारणा में संभाव्य दो धरुवों या दो अतियों को छोड़ कर मध्यम मार्ग अपनाया जाया है। जैनदर्शन के अनेकांत में भी मध्यममार्ग अपनाया जाता है, पर उसमें दोनों अतियों को भी स्वीकार कर लिया जाता हैय तथा मध्यम मार्ग को भी। इस दृष्टि से मतिलाल (1981:18) कहते हैं कि बुद्ध का मध्यममार्ग निस्सारणात्मक मध्यम मार्ग (exclusive middle) है, जब कि अनेकांतवाद सर्वसमावेशी मध्यम मार्ग (inclusive middle) है। मतिलाल के अनुसार

विभज्यवाद का ही विकास अनेकान्तवाद के रूप में हुआ।

नागार्जुन ने बुद्ध की इस विभज्यवादी पद्धति को ही शून्यता के द्वारा समझाया। शून्यता सर्वदृष्टिप्रहाण है – 'शून्यता सर्वदृष्टीनां प्रोक्तं निस्सरणं बुधैः। 'यह सर्वदृष्टिप्रहाण स्वतः संवाद की पीठिका रचता है। यदि एक दृष्टि को स्वीकार कर के अन्य का निषेध किया जायेगा, तो संवाद टूटेगा। सभी दृष्टियाँ छूट जाती हैं, तो शून्यता या मौन बचता है। बुद्ध अपने अनुयायियों को इस मौन में ले जा कर भी संवाद करते रहे। अष्टसहस्रिकाप्रज्ञापारमिता में बुद्ध कहते हैं कि सत्य अपने भीतर आत्मसंवाद में पाया जा सकता है। विमलकीर्तिसुत्त में भी यही कहा गया कि बुद्ध अपने मौन में संवाद करते हैं।

विभज्यवाद के द्वारा बुद्ध किसी भी वस्तु या अवधारणा की विभिन्न कोटियों में परीक्षण कर के उस को लेकर प्रश्न उठाने के लिये अपने शिष्यों को प्रोत्साहित करते थे। बुद्धत्व प्राप्ति के पूर्व अरियपर्येसना (आर्यपर्येषणा) अर्थात् सत्य की खोज के उपक्रम में भी उन्होंने स्वयं विभिन्न ज्ञानियों दार्शनिकों से परामर्श करते हुए इसी पद्धति को अपनाया। जिन ज्ञानियों व चिंतकों से उन्होने विविध अवधारणाओं पर इस दृष्टि से संवाद किया उनमें आलार कालाम, तथा उद्दक रामपुत्त उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त संजय कात्यायान, पुराण कश्यप, मक्कलि गोसाल तथा अजित के सकंबली भी बुद्ध के समकालीनों में महत्त्वपूर्ण दार्शनिक तथा तत्त्वान्वेषी थे। आजीवन संप्रदाय के प्रवर्तक आचार्य ककुद कच्चायन भी लगभग इसी समय पाँचवीं शताब्दी ई.पू.में हुए।

बुद्ध अपने इन समकालीनों की विचारधाराओं का विभज्यवाद की सरणि पर परीक्षण करते हुए इनकी अतियों को अस्वीकार करते हैं पर उनमें से स्वीकार्य की व्याख्या करते हैं। वे बार-बार कहते हैं जाति से ब्राह्मण नहीं होता कर्म से ब्राह्मण होता है। तब वे जातिवाद को अस्वीकार करते हैं, पर ब्राह्मणत्व को स्वीकार करते हैं। वे कर्मकाण्ड तथा पुरोहितों के पाखंड की भर्त्सना करते हैं। मंखलि घोसालत थाब्राह्मणवादीध र्मक े ि त्रवर्गक े ि सद्धांतोंक ा विरोध भी बुद्ध उनकी एकांशिकता के कारण करते हैं।

अपनी विभज्यवादी पद्धति के द्वारा बुद्ध उपनिषदों के तत्त्वचिन्तन से संवाद करते हैं। वे वेदों के अपौरुषेयत्व को अस्वीकार करते हैं, पर वेद में निहित ज्ञान को अपने संदेश में अंतर्भावित करते हैं। बुद्ध विद्रोही नायक नहीं हैं, वे अपने समय के एक बड़े संवादपुरुष हैं। विद्रोही सब कुछ का नकार करता है, संवादपुरुष अग्राह्य को अस्वीकार कर के ग्राह्य को स्वीकार करता है। ग्राह्याग्राह्य के विवेक के लिये विमर्श की जो प्रणाली बुद्ध और उनके अनुयायियों ने विकसितक ी,उ सका ि ववेचनद ार्शनिकोंक ीप रम्पराम े कथा की अवधारणा के अंतर्गत किया गया। वे सनातन धर्म को स्वीकार करते हैं, पर कहते हैं कि सनातन धार्म क्या है – यह विभज्यवाद के द्वारा समझना होगा।

पर केवल वाद करने के लिये ऐसी पद्धतियों का उपयोग बुद्ध ने उचित नहीं माना। केवल वाद के लिये वादशास्त्र का उपयोग कलह तथा विवाद को ही जन्म देता है। संवाद मनुष्य के व्यवहार का सकारात्मक पक्ष है, विवाद नकारात्मक। सुत्तनिपात के कलहविवादसुत्त में बुद्ध इस प्रश्न की विभज्यवादी व्याख्या करते हैं कि कलह, विवाद, विलाप, शोक, मात्सर्य, मान, अभिमान तथा पैशुन्य (चुगली) – ये विकारम नुष्यक े भ ीतरक योंअ ौरक ैसेज न्मल ेतेह ै।व े कहते हैं कि (कलह विवाद, विलाप, शोक, मात्सर्य, मान, अभिमान तथा चुगली प्रिय वस्तु (में आसक्ति) से जन्म लेते हैं। कलह और विवाद जहाँ जहाँ होंगे वहाँ मात्सर्य होगा और विवाद के होने पर चुगली होगी।अपनी कार्यकारणवादी तार्किकपद्धति से विश्लेषण करते हुए बुद्ध बताते हैं कि प्रिय वस्तुओं में आसक्ति इच्छा से उत्पन्न

नागार्जुन ने बुद्ध की इस विभज्यवादी पद्धति को ही शून्यता के द्वारा समझाया। शून्यता सर्वदृष्टिप्रहाण है – 'शून्यता सर्वदृष्टीनां प्रोक्तं निस्सरणं बुधैः। 'यह सर्वदृष्टिप्रहाण स्वतः संवाद की पीठिका रचता है। यदि एक दृष्टि को स्वीकार कर के अन्य का निषेध किया जायेगा, तो संवाद टूटेगा। सभी दृष्टियाँ छूट जाती हैं, तो शून्यता या मौन बचता है। बुद्ध अपने अनुयायियों को इस मौन में ले जा कर भी संवाद करते रहे।

होती है, इसी से क्रोध, असत्य व शंका का जन्म होता है। कार्यकारणशृंखला की गवेषणा करते हुए वे प्रिय-अप्रियभाव का मूल स्पर्श में, स्पर्श का नाम और रूप में बताते हुए नाम और रूप के निरोधा की पद्धति समझाते हैं। चूलव्यूहसुत्त सुत्त में बुद्ध प्रश्न उठाते हैं कि मनुष्य विवादों को जन्म क्यों देना चाहता है? इस प्रश्न के समाधान में उनका यही कहना है कि जो लोग मध्यम मार्ग नहीं अपना पाते, तथा विभज्यवाद की पद्धति से ग्राह्याग्राह्य की विवेचना नहीं कर पाते वे किसी एक मत या आग्रह में अटक कर रह जाते हैं। तब वे घोषणा करने लगते हैं कि केवल उन्हीं का मत स्वीकार्य है। बुद्ध ने निरर्थक विवादों के द्वारा लोकप्रियता पाने, अपनी छवि बनाने की प्रवृत्ति की इस सुत्त में तीव्र भर्स्त्ना की है। स्तुति और निंदा इसी एक प्रवृत्ति के दो चेहरे हैं। अपने मत की प्रशंसा तथा परमत की निंदा करते हुए वादी संवाद तोड़ देता है।

बुद्ध कहते हैं कि यदि सब लोग तर्क का उपयोग अपनी अपनी दृष्टि को ही सत्य साबित करने के लिये बहस करेंगे तो वे सत्य को असत्य बताते रहेंगे (वही,1)। मुक्ति तो मेरे धार्म से ही हो सकती है, दूसरे के धार्म से नहीं--ऐसा आग्रह ले कर चलने वाला कलह का आह्वान करता है।

महावियूहसुत्त में बुद्ध कहते हैं -

न ब्राह्मणस्य परनेय्यमत्थि धम्मेसु निच्छेय्य समुग्गहीतं।

तस्मा विवादानि उपातिवत्तो न हि सेच्छतो पस्सति धम्ममत्त्रं।।13

(ब्राह्मण सत्य के लिये किसी अन्य पर निर्भर नहीं रहता। वह स्वयं विचार करता है और अलग अलग मतों में से किसी को भी ग्रहण नहीं करता। इसलिये वह विवादों से परे हैं और सत्य को छोड़ कर किसी दूसरे धार्म को श्रेष्ठ नहीं मानता।)

बुद्धचर्या के मंगादियसुत्तंत में बुद्ध भिक्षुओं को विवाद में न पड़ने की सलाह देते हैं। अल्पज्ञानी तथा नासमझ विवाद पैदा करते हैं और विवाद के फेर में पड़ते हैं। जिसकी प्रज्ञा प्रतिष्ठित है, वह विवाद में नहीं पड़ता। भीड़ के बीच प्रशंसा पाने के लिये कुछ पण्डितम्मन्य मंच पर विवाद करते हैं। वे अपने प्रतिद्वंदी पर हिंसक भाव से प्रश्न व शंका के बाण छोड़ते हैं और उसे धवस्त कर के प्रसन्न होते हैं, अथवा उसे तर्कों के सामने पराजित होने पर अपना मुँह छिपाते फिरते हैं। विवाद में मनुष्य आक्रमण करता है और या तो विजयी होता है या पराजित। विजयी होने पर उसमें अहंकार जन्म लेता है, जो अंततः उसके पतन का कारण बनता है। वस्तुतः तो अहंभाव ही विवाद में कूदने के लिये उसे प्रेरित करता है। इसलिये अहंकार से रहित ज्ञानी विवाद में सम्मिलित नहीं होता।

बुद्ध और उनके धम्म में विद्रोह के लिये स्थान नहीं है। विद्रोह शब्द द्रोह में वि उपसर्ग लगा कर बना है। बुद्ध कलह, विवाद का विरोध करते हैं, क्यों कि उनमें व्यक्तिगत मात्सर्य, द्वेष और छल किसी भी वादी को दुर्विनियोजन के लिये प्रेरित करते हैं। संघभेद और संघ के भीतर विद्रोह को ले कर बुद्ध के द्वारा दिये गये संकेत तथा उनके अनुयायों के द्वारा की गई उसकी व्याख्या से यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है।

संभवतः बुद्ध अपने जीवन के अंतिम सोपान पर पहुँच कर यह समझ रहे थे कि आगे चल कर संघभेद होगा, ऐसे भी भिक्षु होंगे, तो संघ की व्यवस्था पर प्रश्न और प्रतिप्रश्न तो उठायेगें ही, वे उससे विद्रोह करेगें। बुद्ध के द्वारा संवाद की विलक्षणप्रणाली - विभज्यवाद - को अपना कर उनके सच्चे अनुयायियों ने संघभेद तथा संघ में विद्रोह की भी मीमांसा की।

बुद्ध के महापरिनिर्वाण के पश्चात् उनके अनुयायी उनके वचनों की व्याख्या के लिये बार बार संगीतियों का आयोजन करते रहे। इन संगीतियों में कटु विवाद भी हुए, और संघभेद भी हुआ। पर विवाद के चलते इनमें संवाद के सेतु भी बहुत बने।

(क्रमशः)

(लेखक देश के जाने माने-संस्कृत व सामाजिक मुद्दों के विशेषज्ञ हैं।)

संपर्कः

मो. 9999836088

विशेष

नेताजी का संघर्ष पथ अज्ञात में बड़ी छलाँग

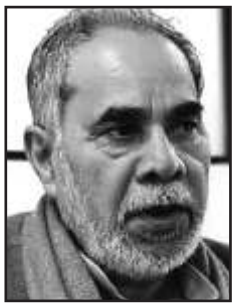

रामबहादुर राय

स्वतंत्रता संग्राम के निर्णायक मोड़ पर महात्मा गांधी के नेतृत्व की कांग्रेस हर तरह से विफल हो गई। वह अपनी योजना में भारत को स्वतंत्र नहीं करा सकी। लेकिन देश अंग्रेजों को भगाने में सफल हो गया, क्योंकि नेताजी सुभाष चंद्र बोस के पराक्रम से उत्पन्न राष्ट्रीय चेतना की लहर में अंग्रेजों के पाँव उखड़ गए। आजाद हिंद की अंतरिम सरकार के घोषणा पत्र में नेताजी ने लिखा कि ''इस दुर्भाग्यपूर्ण (ब्रिटिश) शासन के अंतिम चिह्न को नष्ट करने के लिए केवल एक चिंगारी की जरूरत है। उस चिंगारी को पैदाक रनाि हंदुस्तानक ीम ुक्तिस ेनाक ाद ायित्वह ै।' [1]वहस चमुचप ूरा हुआ। इसे यह घटना खूब अच्छे से समझाती है। बात मार्च, 1946 की है। महात्मा गांधी उरुलीकांचन में थे। पुणे के पास यह गाँव आज भी है। जहाँ प्राकृतिक चिकित्सा का केंद्र उन्होंने बनवाया था।'' उरुलीकांचन में एक फौजी छावनी भी थी।'' [2]प्यारे लाल ने लिखा है कि ''शायद ही कोई दिन ऐसा बीतता होगा जब भारतीय सैनिकों का कोई दल गांधीजी के संपर्क में न आता हो।'' [3]एक दिन सैनिकों के दो दल आए। वे बोले, 'हम सैनिक है, परंतु भारत की आजादी के सैनिक हैं।'[4]

वहाँ आए सैनिकों और गांधीजी के बीच बहुत रोचक बातचीत हुई। इतिहास करवट ले चुका था। उस बातचीत से यही प्रकट होता है। लेकिन उसका वर्णन यहाँ न प्रस्तुत कर सिर्फ इस शोधलेख के काम की ही बातें बताना उचित है। उस बातचीत के क्रम में एक सैनिक गाधीजी से कहता है, 'एक समय था जब हमें कोई अखबार नहीं पढ़ने दिया जाता था। लेकिन आज हम अपने अफसरों से जाकर कहते हैं कि हम अपने देश के सबसे बड़े नेता से मिलने जा रहे हैं और कोई हमें रोकने की हिम्मत नहीं करता।'[5] इस पर गांधीजी ने जो कहा वह वास्तव में इस बात की सहज स्वीकृति है कि देश ने अंगड़ाई ले ली थी। उसकी चेतना सर्वत्र स्वतंत्रतमय हो गई थी। गांधीजी के शब्द हैं, ''मैं जानता हूँ कि सेना के सभी विभागों में आज एक नया जोश और नई जागृति आ गई है। इस परिवर्तन का बहुत कुछ श्रेय नेताजी सुभाष चंद्र बोस को है। मुझे उनकी कार्य-पद्धति पसंद नहीं है, परंतु भारतीय सैनिकों को एक नई दृष्टि और एक नया आदर्श देकर उन्होंने भारत की अनोखी सेवा की है।''[6]

मैं जानता हूँ कि सेना के सभी विभागों में आज एक नया जोश और नई जागृति आ गई है। इस परिवर्तन का बहुत कुछ श्रेय नेताजी सुभाष चंद्र बोस को है। मुझे उनकी कार्य-पद्धति पसंद नहीं है, परंतु भारतीय सैनिकों को एक नई दृष्टि और एक नया आदर्श देकर उन्होंने भारत की अनोखी सेवा की है।

इस पर 'एक बड़े पद वाला सैनिक[7] बोल पड़ा, ''हम सेना के आदमी यह समझ ही नहीं सकते कि कोई आदमी भारत के दो तीन या अधिक टुकड़े करने की बात कैसे सोच सकता है। हम तो एक ही भारत को जानते हैं, जिसके लिए हम लड़े हैं और हमने अपना खून बहाया है।[8] बारी गांधीजी की थी। वे बोले, ''भाई! दुनिया में सब तरह के आदमी होते हैं।[9] इस पर सैनिकों ने ठहाका लगाया। एक सैनिक ने पूछा, ''क्या हम नारे लगा सकते हैं?''[10] गांधीजी ने कहा, ''अच्छा लगाइए।''[11] प्यारे लाल ने अपने वर्णन में लिखा है कि ''उन सबने छोटे बच्चों की तरह उत्साह में आकर' जयहिंद',' नेताजीक ाज य'अ ादिन ारेब ार–बार बोलकर गांधीजी के छोटे से कमरे की छत को हिला दिया।[12] यह एक अल्पज्ञात छोटी सी घटना है। जिसे उन अनगिनत घटनाओं से जोड़ दिया जाए जो तब देश के हर हिस्से में हो रही थीं, तो उथल–पुथल को उन तूफानी दिनों का एक चमकदार बड़ा कोलाज उभरता है, जिसके केंद्र में नेताजी और आजाद हिंद फौज दिखती है। उससे उत्पन्न भावना की व्यापकता का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। शर्त एक ही है, इसके लिए कल्पना के आकाश में थोड़ी ऊँची भरनी होगी।

नेताजी सुभाष चन्द्र बोस पर बहुत किताबें है। लेकिन उनकी राजनीतिक जीवनी पर एक ऐसी किताब है, जो अपने एक अध्याय में यह प्रश्न उठाती है कि क्या नेता जी एशिया में बहुत देर से पहुँचे। इस प्रश्न में अनेक प्रश्न है। इसलिए कि बड़ी उलझी हुई क्षण–क्षण बदलती वैश्विक परिस्थितियों में भारत की स्वतंत्रता का लक्ष्य कैसे पूरा हो, इस बारे में नेताजी सुभाष चंद्र बोस को सिर्फ अर्जुन की भाँति चिड़िया की आँख ही दिख रही थी। लेकिन उस महत प्रयास और पराक्रम को इतिहास की किस नजर से देखा दिखाया गया है, यह इस प्रश्न का एक छोटा सा पक्ष है। महत्वपूर्ण है कि नेताजी को भारत को स्वतंत्र कराने की समर नीति क्या थी? इसे 'द इंडियन स्ट्रगल' पन्ने के स्पष्ट करते हैं। इस पुस्तक से सुभाष चंद्र बोस को वैचारिक आधारभूमि प्रकट होती है। उनका वह रूप सामने आता है जो for सा गया था। रवींद्र नाथ ठाकुर ने उन्हें सही ही देशनायक कहा था। सुभाष चंद्र बोस इतिहास की उस नियति को मानते और अनुभव करते थे जो उनके लिए लिया था। ऐसी साफ समझ बिरले लोगों में पाई जाती है। इसीलिए वे भारतीय इतिहास के ऐसे नायक हुए हैं जो अपनी अलग पहचान और अमिट छाप बनाए रख सके हैं। 'दी इंडियन स्ट्रगल' उसी समय लिखी गई जब नेहरू ने अपनी जीवनी लिखी थी।

सुभाष चंद्र बोस की पुस्तक में इतिहास दृष्टि है। उससे सबसे पहला सिद्धांत स्थापित होता है कि भारत एक लोकतांत्रिक गणराज्य रहा है। इसकी अंग्रेजों ने उपेक्षा की। पर यह ऐतिहासिक सत्य है। इस आधार पर उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम के नेताओं को बोध दिया कि उन्हें पश्चिम की ओर लोकतंत्र के मूल्यों के लिए निहारने की जरूरत नहीं है। अपने भीतर झाँकना काफी है। अपने इतिहास की सही समझ इसके लिए जरूरी है। यह बात कभी जवाहरलाल नेहरू ने नहीं कही। यही नेहरू और सुभाष का अंतर था। पर सिर्फ इतना ही नहीं था। भारतीय जनजीवन में आज नेताजी उस स्थान पर हैं, जिसके वे हकदार थे। ऐसे समय में यह जानने की जरूरत है कि किन परिस्थितियों में उन्हें देश छोड़ने के लिए विवश होना पड़ा? यह सच है कि नेताजी सिर्फ 27 माह ही एशिया में रहे। लेकिन उसे उनके एशिया में पहुँचने से पहले के दो सालों को अलग करके नहीं देखा जा सकता। यहाँ यह दर्ज करना चाहिए कि नेताजी सुभाष चंद्र बोस 6 मई, 1943 को सुमात्रा पहुँचे थे। 1 जुलाई, 1943 को उन्होंने आजाद हिंद फौज की कमान संभाली।य हींय हभ ाीय ादक रें क,म हात्माग ांधीअ ौर पंडित जवाहरलाल नेहरू से आजादी की लड़ाई के सवाल पर निराश होकर उन्हें भारत से बाहर की राह तलाशनी पड़ी। यह उनकी मजबूरी नहीं थी। हाँ, अनिश्चित पथ पर एक बड़ी छलांग अवश्य थी। 1941 में वे भारत से निकल पड़े।

उनका जीवन एक महाकाव्य है। महर्षि अरविंद ने आई.सी.एस. पद ठुकरा दिया था। उस ऐतिहासिक घटना के तीस साल बाद नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने भी सोच–समझकर आई.सी.एस. बनना छोड़ा। यह 1921 की बात है। वे भारत लौटे। स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े। 1921 से 1945 के दौरान छह साल उन्होंने जेलों में बिताए। सात साल देश निकाला में गुजारा। सिर्फ ग्यारह साल उन्हें स्वतंत्रता की अलख जगाने के लिए मिले। वे उस थोड़ी से

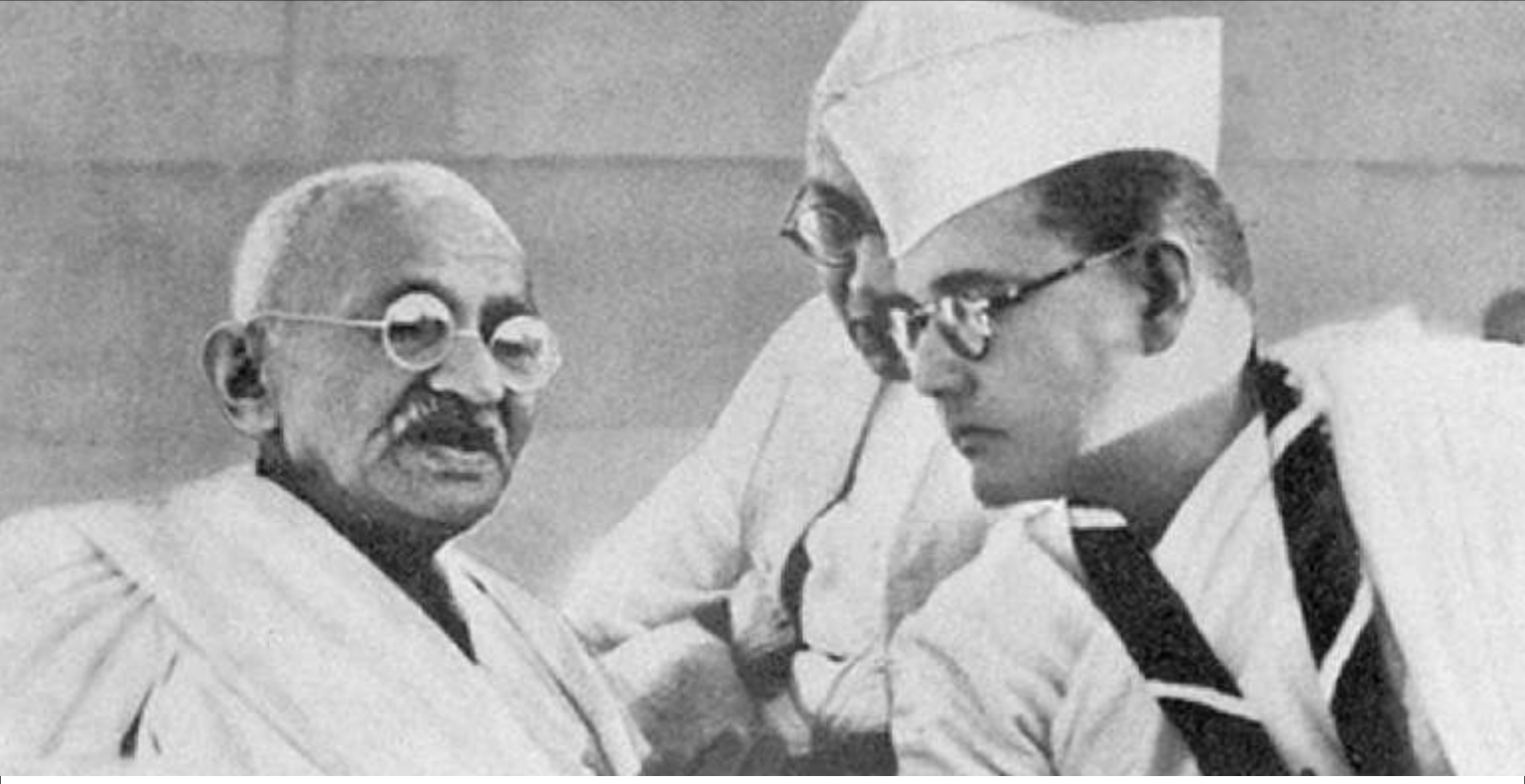

अवधि में स्वतंत्रता की एक प्रबल धारा प्रवाहित कर सके। उनसे अंग्रेजी शासन भयाक्रांत था। वे दो बार कांग्रेस के अध्यक्ष रहे। अगर वे आई.सी.एस. हो जाते तो क्या भारत का इतिहास दूसरा होता? आज हम जानते हैं कि नेताजी सुभाष चंद्र बांस ने आजाद हिंद फौज के प्रधान सेनापति के रूप में साम्राज्यवाद को जितने जोश से ललकारा, उस प्रेरक अनुगूँज ने हर भारतीय को स्वतंत्रता की गहरी भावना से भर दिया। आई.सी.एस. अफसर होकर वे यह नहीं कर पाते। इसे वे जानते थे। इसलिए उन्होंने आत्मत्याग की राह चुनी।

इसमें संदेह नहीं है कि आजाद हिंद फौज ने भारतीय के सोचने के ढंग को पूरी तरह बदल दिया। जब नेताजी ने आजाद हिंद फौज की कमान संभाली तो उसमें बारह हजार वे भारतीय सैनिक थे जो जापानी सेना के युद्धबंदी थे। आजाद हिंद फौज के प्रभाव पर गांधीजी के कथन से हम अवगत हैं। अब हम यह भी जानते हैं कि भारतीय सेना 450 भारतीय अधिकारियों से बढ़कर 1939 से 1945 की अवधि के दौरान 12,000 भारतीय अधिकारियों तक पहुंची थी। ऐसा युद्ध के समय आपात भर्ती के कारण हुआ था। उसी अवधि में सैनिकों की संख्या डेढ़ लाख से बढ़कर 22 लाख हो चुकी थी। [14]भारतीय सैनिकों ने उस युद्ध में अफ्रीका और यूरोप के मोर्चों पर अपने शौर्य का डंका बजाया था। वही समय है जब दक्षिण पूर्व एशिया में जापान की सैनिक बढ़त ने नेताजी के सपनों को मुक्ति सेना के लिए भारत के पूरब में एक अवसर उपस्थित किया।

लेकिन जवाहरलाल नेहरू इसे एक खतरे के रूप में देख रहे थे। उन्होंने प्रेस को एक इंटरव्यू दिया। जिसमें कहा कि ''सुभाष चंद्र बोस और उनकी मुक्ति सेना से लडूंगा, अगर वे भारत की सीमा पर आए''[15] उसी समय कुछ महीने बाद बैंकाक सम्मेलन हुआ। उसकी अध्यक्षता क्रांतिकारी नेता रासबिहारी बोस कर रहे थे। नेताजी ने अपना संदेश भेजा। भारत से स्टैफोर्ट क्रिप्स के प्रस्थान के बाद हमारे राष्ट्रीय संघर्ष का अंतिम चरण शुरू हो गया है। इस ऐतिहासिक संघर्ष, में सभी राष्ट्रवादी चाहे से भारत में हो या बाहर अपना कर्तव्य अवश्य पूरा करें। पिछले अठारह महीनों के अपने अनुभव से मुझे विश्वास हो गया है कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ हमारी लड़ाई में त्रिापक्षी शक्तियों भारत में बाहर हमारी सबसे अच्छी मित्र और सहयोगी है, तथा नि:संदेह में हमें जैसी भी सहायता की जरूरत होगी, खुशी-खुशी देंगे किंतु भारत को मुक्ति का काम मुख्यतया स्वयं भारतीयों का ही होगा।'[16]

भारत की स्वतंत्रता के प्रश्न पर उस समय की अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों का प्रभाव वा था। यह प्रश्न आज भी जटिल बना हुआ है कि उन अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों का भारत की स्वतंत्रता के संदर्भ में सही आंकलन किसका था? क्या महात्मा गांधी सही थे? क्या पंडित नेहरू सही थे? क्या सुभाष चंद्र साँस सही थे? ये महापुरुष एक त्रिकोण बनाते है। कौन सही था, यह किस दृष्टिकोण से देखा जा रहा है, इससे ही निर्धारित होगा। इसलिए जरूरी है कि नेताजी सुभाष चंद्र बोस के प्रयासों को भी जाने। वे 1943 के शुरू में जर्मन अधिकारियों को यह समझा पाने में सफल रहे कि जापानियों के साथ एशिया में सशस्त्र संघर्ष चलाकर ही वे भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अपनी भूमिका बेहतर तरीके से निभा सकते हैं।[17] यह भी एक संयोग था कि उसी समय जापान अधिकारी भी जर्मन अधिकारियों को यह संदेश दे रहे थे कि सुभाष को एशिया या प्रशांत को युद्धभूमि में होना चाहिए। इससे उन्हें और मदद मिल गई।''[18]

आजाद हिंद फौज को अपने युद्ध मोर्चे पर भले ही पूरी सफलता न मिली हो लेकिन नेताजी सुभाष चंद्र बोसक ीस मरन ीतिस फल रही। उस दौर में पंडित नेहरू के बयान बताते हैं कि ये नेताजी को अपना प्रतिद्वंदी नहीं, शत्रु समझने लगे थे। इसे वामपंथियों ने गहरा रंग दिया। उन्हें जापानी प्रधानमंत्री तोजो से जोड़कर गालियाँ दी गई। यह राजनीति का मनगढ़ंत खेल था। सच तो यह था कि 'नेताजी सुभाष चंद्र बोस की योजना में भारत की स्वतंत्रता स्वायत होनी थी।

नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने 6 जुलाई, 1944 को एक रेडियो प्रसारण में महात्मा गांधी को संदेश दिया। वह काफी लंबा है। जिसमें बहुत सारी सूचनाएँ हैं। इसे पढ़ते हुए अनुभव होता है कि वे उस दुष्प्रचार से परिचित थे, जो भारत में उनके बारे में किया जा रहा था। उन्होंने स्पष्ट किया कि वे जापान कब और क्यों आए। मैं जापान तब तक नहीं आया जब तक इंग्लैंड और जापान के बीच संधि रही। मैं जापान तब तक नहीं आया जब तक दोनों देशों के बीच सामान्य कूटनीतिक संबंध थे। जब जापान ने इंग्लैंड और अमेरिका के खिलाफ युद्ध की घोषणा की, जिसे मैं उसके इतिहास का सबसे महत्त्वपूर्ण कदम मानता हूँ तब मैंने अपनी मर्जी से जापान जाने का फैसला किया। उन्होंने उसी संदेश में यह भी बताया कि अंतरिम आजाद हिंद सरकार को जापान, जर्मनी और सात अन्य मित्र देशों ने मान्यता दी है जिसके कारण सारी दुनिया में भारतीयों को एक नया महत्त्व और प्रतिष्ठा मिली है। अंतरिम सरकार का एक लक्ष्य है, और वह है सशस्त्र संघर्ष द्वारा भारत को अंग्रेजों को गुलामी से आजाद करना। एक बार जब हमारे दुश्मन देश से निकाल दिए जाते हैं और शांति और व्यवस्था कायम हो जाती है। अंतरिम सरकार का मिशन पूरा हो जाएगा।[20]

आजाद हिंद फौज को अपने युद्ध मोर्चे पर भले ही पूरी सफलता न मिली हो लेकिन नेताजी सुभाष चंद्र बोस की समर नीति सफल रही। उस दौर में पंडित नेहरू के बयान बताते हैं कि ये नेताजी को अपना प्रतिद्वंदी नहीं, शत्रु समझने लगे थे। इसे वामपंथियों ने गहरा रंग दिया। उन्हें जापानी प्रधानमंत्री तोजो से जोड़कर गालियाँ दी गई। यह राजनीति का मनगढ़ंत खेल था। सच तो यह था कि 'नेताजी सुभाष चंद्र बोस की योजना में भारत की स्वतंत्रता स्वायत होनीथ ी।[21]व हय ोजनाप ूरीत रहस ाकारन हींह ोस की। लेकिन नेताजी ने आत्मबलिदान कर भारत को आजादी दिला दी। उनकी भूमिका उत्प्रेरक बनी। सफलता तो महात्मा गांधी को भी वैसी नहीं मिली जैसी वह चाहते थे। लेकिन यह कह सकते हैं कि अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों का जो आकलन गांधीजी ने किया था, वह ज्यादा सही था। पंडित नेहरू तो बहुत पहले ही खुद को अंग्रेज जैसा बता चुके थे। यहाँ एक प्रश्न और पैदा होता है। क्या महात्मा गांधी ने 'भारत छोड़ो' का नारा नेताजी के अंतरराष्ट्रीय प्रयासों के दबाव में दिया? इसके बारे में अपने-अपने ख्याल हो सकते हैं। एक तथ्य अवश्य है कि गांधीजी ने तीन आंदोलन चलाए। पहला 1920 में दूसरा एक दशक बाद था। तीसरा एक दशक बाद होता अगर नेताजी की बात ये मान लेते। लेकिन महात्मा गांधी ने तीसरी लड़ाई ठीक 12 साल बाद छेड़ी। वह 1942 को अगस्त क्रांति कहलाई।

राजमोहन गांधी मानते हैं कि सुभाष चंद्र बोस की गांधी से असहमति 1920 के दशक में हो शुरू हो गई और सुभाष ने अहिंसा के सिद्धांत पर अपनी असहमति भी जता

दी।[23]न ेताजीस ुभाषच ंद्रब ोसक ीअ सहमतिक ाअ ाधार उनकी ईमानदार निष्ठा थी। फिर भी उन्होंने युद्ध क्षेत्र से अपने रेडियो प्रसारण में हमेशा गांधी को राष्ट्रपिता कहकर संबोधित किया। असहमति तो नेहरू की भी थी। लेकिन ये चतुर राजनीतिक थे और महात्मा गांधी के प्रति निष्ठा का दिखावाउ नकीर णनीतिथ ी।इ सकेब ारेम ेंउ नकेज ीवन लेखकों ने भी लिखा है। जापान पहुँचकर नेताजी ने एक मार्मिक अपील की। उन्होंने अपने रेडियो संदेश में कहा कि भारत अपनी आजादी तभी प्राप्त कर सकेगा जब देशभक्त भारतीय का रक्त बहेगा।'' [23]ऐसा ही हुआ भी। ब्रिटिश सेना से लड़ते हुए आजाद हिंद फौज के 60 हजार सैनिकों में से 26 हजार सैनिकों ने अपने प्राण त्याग दिए।[24]

विश्वयुद्ध के अंत में ब्रिटिश भारत के प्रधान सेनापति अचिन लेक ने दर्ज किया है कि आजाद हिंद फौज और युद्ध के दौरान भर्ती किए गए सेना के सैनिक हथियार बंद होकर घूम रहे हैं। सेना के मुख्यालय ने निष्कर्ष निकाला कि भारतीय अफसर और सैनिक भरोसेमंद नहीं है। सच तो यह था कि भारत में अंग्रेज बागी सैनिकों से घिर गएथ ेअ ौरअ ाशंकितथ े।उ नकीअ ाशंका सही निकली जब नौसेना विद्रोह हुआ। कराची से कलकत्ता तक के तटीय ठिकानों के 66 नौसैनिक जहाजों में सवार 10 हजार नौसैनिकों ने बगावत कर दी।[25]यह मारक घटना शुरू हुई, 18 फरवरी, 1946 को। जिसके अगले ही दिन ब्रिटेन के प्रधानमंत्री लार्ड क्लीमेंट एटली को यह घोषणा करनी पड़ी कि सता हस्तांतरण के लिए कैबिनेट मिशन भारत जाएगा। इस समय हम जानते हैं कि नेताजी सुभाषचंद्र बोस की आजाद हिंद फौज कारक थी।

प्रधानमंत्रीन रेंद्रम ोदीक ेि नर्णयोंस ेन ेताजीस ुभाष चंद्र बोस राष्ट्रीय जनजीवन में सम्मान के ऊँचे स्थान पर विराजमान किए जा सके हैं। इतिहास की एक बड़ी भूल सुधारी जा चुकी है। इसमें एक उत्सुकता भी पैदा हुई है। लोगों में इस बात को जानने की जिज्ञासा उभरी है कि स्वतंत्रता आंदोलन के उस कालखंड की कहानियाँ कैसी थीं। इसे जानने के लिए हमें सीधे उस कथालेखक की मदद लेनी चाहिए, जिसका नाम है सुभाष चंद्र बोस। उनको दो किताबें हैं। एक आत्मकथा (जो अधूरी ही रही।) दूसरी 'दी इंडियन स्ट्रगल' इन किताबों से यह जानकारी मिलती है जिसे नेताजी बताते हैं। इसलिए किसी दूसरे की गवाही गैरजरूरी है। 1940 में नेताजी अंतिम बार गांधीजी से मिले।

इ सकाव र्णनउ न्होंनेइ सप्र कारि कया।ह ै'' 'जेल जाने से कुछ दिन पहले जून, 1940 में मेरी महात्मा गांधी और उनके सहायकों से अंतिम और लंबी बातचीत हुई। उस समय भारत में फ्रांस के हथियार डाल देने की खबर पहुँच चुकी थी। जर्मन सेनाएँ बड़े विजपोल्लास के साथ पेरिस में दाखिल हो चुकी थीं। इंग्लैंड और भारत में ब्रिटिश का मनोबल नीचा था। एक ब्रिटिश मंत्री ने ब्रिटिश जनता को मायूस और मातमी शक्लें बनाए रहने पर बड़ा लताड़ा था। भारत में फारवर्ड ब्लाक में जो सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरू किया था वह चल रहा था और ब्लाक के बहुत से नेता जेल जा चुके थे। अत: मैंने महात्मा जी से आगे आकर अपना सत्याग्रह आंदोलन शुरू करने की भावभरी अपील की क्योंकि यह स्पष्ट था कि ब्रिटिश साम्राज्यअ बख ात्मह ो जाएगा। और यह भारत के लिए युद्ध में अपनी भूमिका अदा करने का सबसे अच्छा मौका है।''[26]

विश्वयुद्ध के अंत में ब्रिटिश भारत के प्रधान सेनापति अचिन लेक ने दर्ज किया है कि आजाद हिंद फौज और युद्ध के दौरान भर्ती किए गए सेना के सैनिक हथियार बंद होकर घूम रहे हैं। सेना के मुख्यालय ने निष्कर्ष निकाला कि भारतीय अफसर और सैनिक भरोसेमंद नहीं है। सच तो यह था कि भारत में अंग्रेज बागी सैनिकों से घिर गए थे और आशंकित थे। उनकी आशंका सही निकली जब नौसेना विद्रोह हुआ। कराची से कलकत्ता तक के तटीय ठिकानों के 66 नौसैनिक जहाजों में सवार 10 हजार नौसैनिकों ने बगावत कर दी।

उस बातचीत से नेताजी ने जो समझा, उसका वर्णन उन्होंने इन शब्दों में किया है, लेकिन महात्मा जो अब भी कुछ करने का वचन देने को तैयार नहीं थे। उन्होंने फिर अपनी ही रामकहानी दुहरा दी कि मेरी दृष्टि में देश के लिए तैयार नहीं है और इस समय यदि संघर्ष को नौबत लाई गई तो लाभ के बजाय भारत को हानि अधिक उठानी पड़ेगी। खैर बहुत लंबी और

खुली बातचीत के बाद उन्होंने कहा कि यदि भारत को आजाद करने के तुम्हारे प्रयत्न सफल होते हैं तो मैं तुम्हें का तार भेजने वाला सबसे पहला आदमी होऊंगा।[27]

ऐसा नहीं है कि से सिर्फ गांधीजी से मिले। उन्होंने दूसरे नेताओं से मिलने का वर्णन भी किया है, ''इस मौके पर मैंने अन्य संगठनों के नेताओं से भी बातचीत की, जैसे कि ऑल इंडिया मुस्लिम लीग के प्रधान मि. जिन्ना से, अ. भा. हिंदू महासभा के अध्यक्ष विनायक दामोदर सावरकर से। उस समय जिन्ना अंग्रेजों की मदद से पाकिस्तान को अपनी योजना को पूरा करने की सोच रहे थे। कांग्रेस के साथ मिलकर भारत को आजाद कराने के लिए राष्ट्रीय संघर्ष शुरू करने के मेरे सुझाव का जिन्ना पर जरा भी प्रभाव नहीं पड़ा। मैंने सुझाव दिया था कि यदि इस प्रकार मिल-जुलकर संघर्ष किया गया तो स्वतंत्र भारत के पहले प्रधानमंत्री बनेंगे। सावरकर अंतरराष्ट्रीय स्थिति से बिलकुल अनभिज्ञ दिखाई देते थे और बस यही सोच रहे थे कि ब्रिटेन की भारत में जो सेना है उसमें घुसकर हिंदू किस प्रकार सैनिक प्रशिक्षण प्राप्त करें। इन मुलाकातों के बाद मैं इसी नतीजे पर पहुंचा कि मुस्लिम लीग या हिंदू महासभा से किसी प्रकार की कोई आशा नहीं की जा सकती।[28]

नेताजी ने यह याद दिलाया है कि 20 मई 1940 को पंडित नेहरू ने तो एक बड़ा ही आश्चर्यजनक व्यक्तव्य दे डाला, जिसमें उन्होंने कहा कि ऐसे वक्त में जब ब्रिटेन जीवन और मृत्यु के संघर्ष में लिप्त है उस समय सत्याग्रह या सविनय अवज्ञा आरंभ करना भारत के सम्मान के लिए घातक होगा। इसी प्रकार महात्मा जी ने भी कहा कि हम ब्रिटेन के विनाश के बदले अपनी आजादी नहीं लेना चाहते।

नेताजी ने यह याद दिलाया है कि 20 मई 1940 को पंडित नेहरू ने तो एक बड़ा ही आश्चर्यजनक व्यक्तव्य दे डाला, जिसमें उन्होंने कहा कि ऐसे वक्त में जब ब्रिटेन जीवन और मृत्यु के संघर्ष में लिप्त है उस समय सत्याग्रह या सविनय अवज्ञा आरंभ करना भारत के सम्मान के लिए घातक होगा। इसी प्रकार महात्मा जी ने भी कहा कि हम ब्रिटेन के विनाश के बदले अपनी आजादी नहीं लेना चाहते। यह अहिंसा का तरीका नहीं है। यह साफ हो गया था कि गांधीवादी लोग अंग्रेजों से समझौता करने की हर संभव कोशिश कर रहे थे।''[29]

इसीलिए वे भारत से निकले। 'दिल्ली चलो' का नारा दिया। इसे बड़े मार्मिक शब्दों में नेताजी ने अपने संदेश में गांधी को बताया। ''यदि मुझे इसको थोड़ी भी आशा होती कि विदेश में रहकर काम किए बिना हम अपनी आजादी पा सकते थे, तो मैं भारत कभी नहीं छोड़ता। जब देखा कि परिस्थितियाँ विपरीत हो रही हैं, तो उन्होंने 15 अगस्त, 1945 को एक विशेष आदेश आजाद हिंद फौज को दिया, ''साथियों में यह महसूस करता हूँ कि इस संकट को समय अतीस करोड़ भारतीय हमारी भारत की मुक्ति वाहिनी के सदस्यों की ओर देख रहे हैं। इसलिए भारत के प्रति सच्चे बने रहिए और एक क्षण के लिए भी भारत के भविष्य में अपना विश्वास मत खोइए। दिल्ली जाने के कई मार्ग हैं और दिल्ली अब भी हमारा लक्ष्य है।[31] नेताजी ने उसी दिन दक्षिण पूर्वी एशिया के देशों में रह रहे भारतीयों को एक संदेश दिया। उस छोटे से संदेश का अंतिम वाक्य है, ''दुनिया की कोई भी ताकत भारत को गुलाम नहीं रख सकती। भारत आजाद होगा और बहुत जल्द होगा।''[32]

यह ऐतिहासिक तथ्य है कि दूसरे विश्व युद्ध के समाप्त होने पर भारत में आजादी की लड़ाई बिखर गई थी। उस समय आजाद हिंद फौज के सैनिक बरदान स्वरूप दिल्ली के लाल किले में पहुँचे नेताजी का नारा था, दिल्ली चलो वह अपने ढंग से साकार हुआ। लाल किले में मुकदमा चला। हर घर में आजाद हिंद फौज और नेताजी को वीरगाथा पहुँच गई। महात्मा गांधी ने भी माना कि ''सारा देश जग गया है। एक नई राजनीतिक चेतना ने सेना के नियमित सैनिकों को भी आंदोलित कर दिया है। वे भी आजादी के बारे में सोचने लगे हैं।[33] नेताजी विमान दुर्घटना में मारे गए, इसे नेताजी के परिवारीजन भी अब स्वीकार करने लगे हैं। नेताजी के प्रपौत्र चंद्र कुमार बोस ने इसे एक दिन बातचीत में स्वीकार किया। उन्होंने कहा कि ''नेताजी की मृत्यु की जाँच के लिए दस आयोग बने हैं। एक मे ही वह भी भ्रमवश रिपोर्ट दी कि नेताजी 1945 की दुर्घटना में बच गए थे। वह मुखर्जी आयोग था।[34]

आशय यह कि नेताजी पर बनाया गया भ्रम दूर हो गया है। वे यह भी स्वीकार करते हैं कि ''अटल बिहारी

वाजपेयी और नरेंद्र मोदी की सरकारों ने नेताजी को राष्ट्रीय जीवन में उनका सम्मान वस्तुत: कायम किया।[35] ऐसा क्यों नहीं पहले हुआ? इसका सटीक उत्तर शरत चंद्र बोस के पत्र में है 'ज्यादातर प्रमुख कांग्रेसी नेता मेरे भाई के राजनैतिक शत्रु थे और उन्हें नीचा दिखाने को भरपूर कोशिश करते रहे थे।[36] लेकिन उन्होंने महात्मा गांधी से जो कामना की थी, उसकी ओर ध्यान प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने दिया। नेताजी चाहते थे कि अपने प्रयासों कष्टों, और बलिदान के लिए हम केवल एक ही पुरस्कार चाहते है, और यह है भारत की आजादी।[37]नेहरूकालीन भारत और नरेंद्र मोदीयुगीन भारत का अंतर समझने के लिए नेताजी सुभाष चंद्र बोस का उदाहरण काफी है। नेहरूयुगीन भारत में नेताजी को भुलाने के प्रयास ज्यादा किए गए, याद करने के कम किए।

कोई महान नेता जब इतिहास का अंग हो जाता है तो उसे उसका उचित स्थान कई बार देर से मिलता है। राष्ट्र के जीवनम ंउ सेि कसप ायदानप रर खाज ानाच ाहिए,य ह प्रश्न उठता तो है, लेकिन उसका निर्धारण इस पर निर्भर करता है कि देश का नेतृत्व कौन कर रहा है, उसकी चिंतन दिशा क्या है क्या यह अपने महापुरूषों को राजनीति के चश्मे से ही देखता है और क्या यह आत्मविश्वास से भरपूरा है। यह धारणा पक्की हो गई है और इसमें सचाई भी है कि नेताजी सुभाष चंद्र बोस को भारत के राष्ट्रजीवन में अपना उचित स्थान पाने के लिए लंबा इंतजार करना पड़ा है। हालांकि वे भारत के जन-जन में शुरू से ही आदर के स्थान पर रहे हैं। लेकिन केंद्र की सरकारों ने उनकी उपेक्षा की है। वे सरकारें नेहरुधारा की रही हैं। पहली बार उन्हें गर्व और गौरव से नरेंद्र मोदी की सरकार ने याद किया। ऐसा भी नहीं है कि किसी समूह ने इसकी मांग की हो। सच यह है कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का राष्ट्रनायकों के प्रति एक विजन है। या कृतज्ञता का है।

वहीअ ाधारब नाज बन ेताजीक ो1 25ज यंतीअ ा रही थी तो प्रधानमंत्री ने अपनी पहल पर संस्कृति मंत्रालय को निर्देश दिए। फिर एक सिलसिला शुरू हुआ। उसी क्रम में प्रतीकस्वरूप नेताजी की मूर्ति इंडिया गेट पर लगाई गई है। राजपथ अब कर्तव्य पथ हो गया है। भारत को राष्ट्रीयता का एक नया महातीर्थ उपलब्ध हो गया है। यह आजादी के अमृत महोत्सव काल में संभव हो सका। जो अमृतकाल की संकल्प यात्रा का सूचक है।

संदर्भ

1. पूर्ण-12
2 बड़ी
3. नहीं
डब्ल्यू 229
7. यही
9. यही
10. यही
11. यही
12. W-T-229
13. पॉलिटिक्स सीएम
14. किशु
7.79-16 15 स्टेड एम.-12
27. सही पृष्ठ-271-272
28. ही पुछ-271-272
29 8-271-272
30 संपूर्ण चन्द 12 पृष्ठ 201
31. संपूर्णचंद 12-396-397
32. एमटी, -396
33. महात्मा गांधी - VII- 1945 में 1947, डी.जी तेंदुलकर (नई दिल्ली-प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, पुनर्मुद्र, 1988) पृष्ठ-113
34. बद्रीकुमार से इसकी फोन पर बातचीत के आधार पर
36ण मां मधु और भारतीय एक करीब का विवरण 10 अप्रैल 1948 को मैदमकल को लिखे पत्र का पृष्ठ-230
37.स ंपूर्ण-12र ाष्ट्रपिताम हात्माग ांधीक ोप्र देशज ुलाई 1944 को प्रसारित पृष्ठ 207

(लेखक गांधी कला केन्द्र के अध्यक्ष हैं।)

स्वराज की तत्त्वमीमांसा

नंद किशोर आचार्य

स्वराज को परिभाषित करते हुए महात्मा गांधी 'हिन्द स्वराज' में निष्कर्ष स्वरूप कहते हैं: ''अपने मन पर राज्य स्वराज्य है।'' कुछ हिन्दी अनुवादों में 'मन पर राज्य' के बजाय 'मन का राज्य'' कहा गया है। लेकिन इससे विभ्रम पैदा हो सकता है क्योंकि 'मन का राज्य' का तात्पर्य मन के अनुसार राज्य अर्थात् मनमौजी राज्य भी लिए जाने की गुंजाइश बनी रहती है। अंग्रेजी अनुवाद में स्वयं महात्मा गांधी ने 'सेल्फ रुल' और 'सैल्फ कंट्रोल' कहा है ''रियल होमरुल इज सेल्फरूल और सैल्फ कंट्रोल। गुजराती मूल में भी यही कहा गया है कि अपने मन पर राज्य स्वराज है। महात्मा गांधी स्वयं इस शब्द की व्याख्या करते हुए उसे 'आत्मनिग्रह' के अर्थ में लेते हैं: ''स्वराज एक पवित्र शब्द है, यह एक वैदिक शब्द है, जिसका अर्थ है स्वशासन तथा आत्मनिग्रह। इसका अर्थ सब प्रकार के संयमों से मुक्ति नहीं है, जैसा कि प्राय: स्वतन्त्रता का अर्थ लगाया जाता है।

जब 'अपने मन पर राज्य' कहा जाता है तो उसे 'अपने मन पर अपना राज्य' की तरह पढ़ा जाना चाहिए, क्योंकि किसी अन्य का हमारे मन पर 'राज्य' 'स्वराज' नहीं कहा जा सकता। तो क्या गांधीजी किसी व्यक्तिवादी व्यवस्था का आग्रह कर रहे हैं? यह विभ्रम पैदा हो सकता है। लेकिन, जब गांधीजी स्वयं यह स्पष्ट कर देते हैं कि इसका अर्थ सब प्रकार के संयमों से मुक्ति नहीं है, तो सवाल यह उठना चाहिए कि वे यहाँ किस प्रकार के संयमों की बात कर रहे हैं। स्पष्ट है कि वे संयम भी बाहरी नहीं हो सकते, क्योंकि तब उन्हें 'स्वराज' नहीं कहा जा सकेगा। 'स्वराज' किसी अन्य सत्ता की प्रभुता के अन्तर्गत नहीं हो सकता। लेकिन, तब हमें 'स्व' के तात्पर्य को भी समझना होगा। क्या 'स्व' एक निरपेक्ष और पृथक् अस्तित्व है? यदि वह पृथक् नहीं है, और अन्य से सम्पृक्त हैं, तो उसके 'स्व' की वह प्रकृति और स्वरूप क्या हो सकता है, जो उसे 'स्व' बनाता है? क्या 'स्व' की कोई अपनी तत्वमीमांसा हो सकती है, जो अन्य से सम्पृक्ति के साथ उसके 'स्व' का पालन कर सके ?

जिन धर्म-दर्शनों का आधाार कर्मवाद और पुनर्जन्मवाद में है, वहाँ तो स्पष्ट ही अन्य से सम्पृक्ति के साथ 'स्व' की अवधारणा विकसित हुई है, क्योंकि प्रत्येक जीव अपने कर्म के लिए उत्तरदायी है और उसी के अनुसार कर्मफल के रूप में उसका पुनर्जन्म और उसका रूप निर्धारित होता है। इसे

जब 'अपने मन पर राज्य' कहा जाता है तो उसे 'अपने मन पर अपना राज्य' की तरह पढ़ा जाना चाहिए, क्योंकि किसी अन्य का हमारे मन पर 'राज्य' 'स्वराज' नहीं कहा जा सकता। तो क्या गांधीजी किसी व्यक्तिवादी व्यवस्था का आग्रह कर रहे हैं? यह विभ्रम पैदा हो सकता है। लेकिन, जब गांधीजी स्वयं यह स्पष्ट कर देते हैं कि इसका अर्थ सब प्रकार के संयमों से मुक्ति नहीं है....

चाहें तो ईश्वरीय विधान कह सकते हैं, लेकिन ईश्वर यहाँ अपने नियम के रूप में अभिव्यक्त होता है, जिसके अनुपालन में स्वयं उसका भी कोई हस्तक्षेप सम्भव नहीं है। इस प्रकार, सारा दायित्व 'स्व' पर डाल दिया गया है। महात्मा गांधी स्वयं इस धारणा का बलपूर्वक समर्थन करते हैं।

''मैं ईश्वर को साकार नहीं मानता। मेरी दृष्टि में सत्य ही ईश्वर है, और ईश्वरीय नियम तथा ईश्वर कोई वैसी अलग-अलग चीजें नहीं हैं, जैसे कि कोई लौकिक राजा और उसका कानून होते हैं। ईश्वर एक विचार है, स्वयं नियम है। इसलिए, इस बात की कल्पना नहीं की जा सकती कि ईश्वर स्वयं नियम को तोड़ेगा। इसलिए, ऐसा नहीं है कि वह हमारे कर्म का नियमन करके स्वयं अलग हो जाता हो। जब हम यह कहते हैं कि वह हमारे कर्म का नियमन करता है तो हम केवल मनुष्यों की भाषा का प्रयोग कर रहे होते हैं और सर्वव्यापी ईश्वर को मर्यादित कर देते हैं। अन्यथा ईश्वर और उसका नियम सर्वव्यापी हैं और सब के नियन्ता है।''

अपने कर्म और उसके परिणामों की बात करते हुए गांधीजी बताते हैं: ''मैंने गीता की इस मुख्य शिक्षा को अच्छी तरह आत्मसात् कर लिया है कि मनुष्य इस रूप में अपने भाग्य का विधायक स्वयं है कि उसे विकल्पों में से चुनावक रनेक ीअ ाजादीह ै-इ सअ ाजादीक ाव हज ैसे चाहे, प्रयोग करे। लेकिन, परिणाम पर उसका वश नहीं है। स्पष्ट है कि यह परिणाम ईश्वरीय नियम के अनुरूप ही होगा। यदि कर्म का परिणाम अन्य पर भी पड़ता है, जो कि पड़ता ही है, तो निश्चय ही यह नहीं कहा जा सकता कि 'स्व' अन्य सबकुछ से पृथक् है। विनोबा तो कर्मवाद के सिद्धान्त की एक मौलिक व्याख्या करते हुए कहते हैं कि कर्मफल की हमारी समझ बहुत भ्रमपूर्ण है, क्योंकि हम उस पर केवल व्यक्ति के सन्दर्भ में ही विचार करते है, समाजक ेस न्दर्भम ेन हीं।य हम ानतेह ैि कि कसीए क व्यक्ति के कर्म का फल केवल उसे ही नहीं, बल्कि पूरे समाज को भोगना पड़ सकता है। व्यक्ति समाज का अंग है, अत: जहाँ उसके कर्म का फल केवल उस तक सीमित नहीं रह सकता, वहीं पूरे समाज के कर्म का फल वैयक्तिक स्तर पर उसे भी भोगना होता है। यदि पूरे विश्व में एक अखंड चेतना व्याप्त है, तो कोई वैयक्तिक चेतना उसे खंडित नहीं करती, बल्कि वह उसका अंश ही होती है और इस नाते अंश और अंशी दोनों के कर्म एक-दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं। उन्हीं के शब्दों में- ''समाज की जिम्मेवारी व्यक्ति पर, और व्यक्ति की जिम्मेवारी समाज पर है। इसको हम समझते नहीं, लेकिन समझना चाहिए। समाज और व्यक्ति एक-दूसरे में मिले हुए हैं। कर्म के कानून में दोनों अलग नहीं हैं।'' इसे 'यत' अर्थात् सम्पूर्ण सृष्टि के एकत्व के सिद्धान्त के आधाार पर समझा जा सकता है। पारिस्थितिकी आदि प्राकृतिक विज्ञानों के प्रयोगों एवं परिणामों से भी इसकी सम्पुष्टि होती है।

अपने कर्म और उसके परिणामों की बात करते हुए गांधीजी बताते हैं: ''मैंने गीता की इस मुख्य शिक्षा को अच्छी तरह आत्मसात् कर लिया है कि मनुष्य इस रूप में अपने भाग्य का विधायक स्वयं है कि उसे विकल्पों में से चुनाव करने की आजादी है- इस आजादी का वह जैसे चाहे, प्रयोग करे। लेकिन, परिणाम पर उसका वश नहीं है। स्पष्ट है कि यह परिणाम ईश्वरीय नियम के अनुरूप ही होगा। यदि कर्म का परिणाम अन्य पर भी पड़ता है, जो कि पड़ता ही है, तो निश्चय ही यह नहीं कहा जा सकता कि 'स्व' अन्य सबकुछ से पृथक् है।

'स्व' और शेष सृष्टि के बीच एक तात्त्विक ऐक्य का सम्बन्ध है। आत्मा परम आत्मा का ही अंश है, लेकिन इस पारमार्थिक ऐक्य के बावजूद प्रत्येक आत्मा का तब तक अलग अस्तित्व बना रहता है, जब तक परम आत्मा में उसका विलय नहीं हो जाता। उपनिषद्-पूर्व वैदिक दर्शन में ''ईश्वर को प्रकृति से अतीत नहीं, बल्कि प्रकृति में व्याप्त माना गया है। विश्व ईश्वर से उत्पन्न नहीं है, बल्कि स्वयं ईश्वर है।'' यह विचार ईश्वर को सृष्टि का कारण नहीं, बल्कि सृष्टि में व्याप्त मानता है, जिसका तात्पर्य है कि अस्तित्व मात्र अंगी है और प्रत्येक मानव एवं प्रकृति उसके अंग। इन अंगों की अपनी भिन्नता तो है, पर पृथकता नहीं । हिरियन्ना के शब्दों में व्यक्ति और जगत् दोनों एक ही तत्त्व की अभिव्यक्तियाँ है, और इसलिए दोनों तत्त्वत: एक हैं।'' इसलिए, जो भिन्नता

दिखायी देती है, वह रामानुजाचार्य के शब्दों का प्रयोग करें तो 'अपृथक् भिन्नता' है, अर्थात् इस नानात्व की पृष्ठभूमि में एकत्व है। तात्पर्य यह कि 'स्व' की अपनी विशिष्ट भिन्नता तो है, लेकिन अन्य 'स्वों' से उसका पार्थक्य नहीं है।

'स्व' को व्याख्यायित करने में इस तथ्य को भी नहीं भुलाया जा सकता कि प्रत्येक 'स्व' किसी-न-किसी प्राकृतिकअ ौरम ानवीयप रिवेशम ंे र हताह ै,ि जससेउ से पूर्णत: निरपेक्ष नहीं माना जा सकता बल्कि सच तो यह है कि उस 'स्व' की निर्मिति में वह परिवेश भी एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटक होता है। जब हम मानवीय परिवेश की बात करते हैं तो उसमें पारिवारिक सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक परिवेश भी सम्मिलित होता है और प्राकृतिक परिवेश में नदी, पहाड़, जंगल आदि ही नहीं, मानवेतर जीवन के समस्त रूप भी। इसलिए, प्रत्येक स्व अपना वैशिष्ट तो होता है, वही उसकी वैयक्तिकता है लेकिन यह सृष्टि से असम्पृक्त नहीं रह सकता। लेकिन, सम्पृक्ति का तात्पर्य उसकी वैयक्तिकता का लोप नहीं है-बल्कि 'स्व' और परिवेश के बीच एक समंजस सम्बन्ध विधान की निर्मिति है।

महात्मा गांधी की स्वराज की संकल्पना के तत्त्वमीमांसीय आधार 'अपृथक् भिन्नता का समर्थन आधुनिक विज्ञान और चिन्तन भी करते हैं। जिस प्रकार जीवविज्ञान सर्वनिष्ठ लाक्षणिकता के आधार पर समस्त जीवरूपों की पहचान करते हुए, 'होमो सेपियंस' की स्वलाक्षणिकता से मानव की विशिष्ट पहचान करता है, उसी प्रकार मानव नस्ल की सर्वनिष्ठ लाक्षणिकता की तरह किसी विशिष्ट मनुष्य की पहचान उसकी स्वलाक्षणिकता के आधार पर होती है...

इसलिए, महात्मा गांधी यह तो मानते हैं कि, ''अगर व्यक्तिगत स्वतन्त्रता जाती रहे तो निश्चित समझिए कि सब कुछ चला गया, क्योंकि अगर व्यक्ति का ही महत्त्व न रहा तो समाज में बचा ही क्या?'' पर साथ ही वह उसके भी अन्य से जुड़ने की प्रवृत्ति को ही सक्रिय करना चाहते है इसीलिए वह आगे कहते हैं ''व्यक्तिगत स्वतन्त्रता ही मनुष्य को समाज- सेवा के लिए स्वेच्छापूर्वक पूर्णतया समर्पित करा सकती है। अगर यह समर्पण उससे बलपूर्वक कराया जायेगा तो वह यन्त्रचालित मनुष्य की तरह काम करेगा और उसके परिणामस्वरूप समाज बर्बाद हो जायेगा। मनुष्य को व्यक्तिगत स्वतन्त्रता से वंचित करके सम्भवत: किसी समाज की रचना नहीं की जा सकती। यह मनुष्य की प्रवृत्ति के सर्वथा प्रतिकूल है।

सभी धर्म-दर्शनों में मनुष्य के 'स्व' का, अर्थात् उसकी अपनी विशिष्ट लाक्षणिकता का स्वीकार है तथा उसकीए कस र्वनिष्ठल ाक्षणिकताक ोभ् ीउ चितम हत्त्व दिया गया है। सामान्य लाक्षणिकता में वह अपृथक् है तथा स्वलाक्षणिकता में भिन्न या विशिष्ट । महात्मा गांधी भी जब 'स्वराज' का आग्रह करते हैं तो वह एक ओर प्रत्येक व्यक्ति का अपना 'स्वराज' है तो साथ ही ऐसे सभी 'स्वराजों का कुल योग सम्पूर्ण राष्ट्र— बल्कि पूरे मानव समाजक ास् वराजह ोप ाताह ै।म हात्माग ांधीव् यक्तिक ं स्वराज को आधार मानते और कहते हैं: ''जनता के स्वराज का अर्थ है व्यक्तियों के स्वराज का पूर्ण योग। इससे पूर्व 'हिन्द स्वराज' में भी वह कहते हैं: ''हम अपने ऊपर राज करें, वही स्वराज है और वह स्वराज्य हमारी हथेली में है। इस स्वराज्य को आप सपने जैसा न मानें। मन से मान कर बैठे रहने का भी यह स्वराज नहीं है। यह तो ऐसा स्वराज है कि आपने अगर एक बार इसका स्वाद चख लिया हो, तो दूसरों को इसका स्वाद चखाने के लिए आप जिन्दगी भर कोशिश करेंगे। लेकिन, मुख्य बात तो हर शख्स के स्वराज भोगने की है।

महात्मा गांधी की स्वराज की संकल्पना के तत्त्वमीमांसीय आधार 'अपृथक् भिन्नता का समर्थन आधुनिक विज्ञान और चिन्तन भी करते हैं। जिस प्रकार जीवविज्ञान सर्वनिष्ठ लाक्षणिकता के आधार पर समस्त जीवरूपों की पहचान करते हुए, 'होमो सेपियंस' की स्वलाक्षणिकतास ंे म ानवक ीि वशिष्टप हचानक रताह ै, उसी प्रकार मानव नस्ल की सर्वनिष्ठ लाक्षणिकता की तरह किसी विशिष्ट मनुष्य की पहचान उसकी स्वलाक्षणिकता के आधार पर होती है, जो उसे समस्त सृष्टि या मानवता का अंग मानते हुए भी एक विशिष्ट पहचान देती है। मानव शरीर और मुखाकृति की सर्वनिष्ठ लाक्षणिकता है, जो प्रत्येक मानव में मिलती है. लेकिन प्रत्येक व्यक्ति मानव

की अपनी मुखाकृति और कुछ ऐसी शारीरिक विशिष्टता होती है, जो किसी अन्य व्यक्ति में नहीं मिलती। सभी मानवों के चेहरा और अँगूठा – अँगुलियाँ होते हैं, लेकिन इसके बावजूद हर व्यक्ति का चेहरा और अँगूठे-अँगुलियों की विशिष्ट बनावट होती है और केवल अँगूठे की छाप उसकी अलग पहचान का आधार बन जाती है।

यह केवल मानव नस्ल के साथ ही नहीं है। मानवेतर प्राणी जगत् तथा वनस्पति जगत् में भी यही तथ्य दृष्टिगोचर होता है। सभी पशुओं और पक्षियों में सर्वनिष्ठ लाक्षणिकताओं के साथ उनकी प्रजाति की कुछ कुछ स्वलाक्षणिकता होती है और प्रत्येक प्रजाति के प्रत्येक सदस्य की अपनी अलग स्वलाक्षणिकताएं। किसी पेड़ में हजारों पत्तियाँ होती हैं, लेकिन प्रत्येक पत्ती की कुछ ऐसी स्वलाक्षणिकता है, जो उसी पेड़ की अन्य पत्तियों से उसे भिन्न करती है। हमें सभी गायें, बकरियाँ आदि एक जैसी लगती हैं, पर पशुपालक अपने पशु-समूह के प्रत्येक सदस्य को अलग से पहचान लेता है। तात्पर्य यह कि समूची सृष्टि में एकत्व के साथ नानात्व भी है। सर्वनिष्ठ लाक्षणिकताओं के साथ स्वलाक्षणिकताओं का यह संयोजन सृष्टि मात्र की 'अपृथक् भिन्नता' का एक विज्ञानसम्मत तत्त्वमीमांसीय आधाार प्रस्तुत करता है।

महात्मा गांधी का 'स्वराज' शेष समाज अथवा सृष्टि से कटा हुआ नहीं है, उसमें वैयक्तिक वैविध्य का सम्मान तो है, किन्तु समता और एकत्व की उपेक्षा कतई नहीं। जब वह कहते हैं कि 'स्वराज' का तात्पर्य सभी प्रकार के संयमों से मुक्ति नहीं है, बल्कि आत्मनिग्रहमय स्वशासन है,अ ौरस बकास् वराजस ंयुक्तह ोकरज नताक ास् वराज बनताह ै,स् पष्टह ोज ाताह ै कि कय ह' स्वराज'अ ात्मक ं सर्वात्म तक उत्कर्ष का माध्यम है।

वैज्ञानिक दृष्टि मानती है कि प्रकृति से उत्पन्न तथा उसका अंग होने के कारण प्रकृति का नियम मनुष्य तथा उसके व्यवहार पर भी लागू होता है और उसी को आधार बनाकर वह सही दिशा में अपना विकास कर सकता है। अत: इस आधार पर विभिन्न दार्शनिकों ने प्राकृतिक विज्ञानों द्वारा अन्वेषित प्रकृति के नियमों की दार्शनिक और नीतिमीमांसीय व्याख्याएँ की हैं। हेगेल, कार्ल मार्क्स और एम. एन. राय जैसे दार्शनिकों की नीतिमीमांसा प्रकृति या परम तत्त्व की द्वन्द्वात्मकता अथवा एकात्मता पर आधाारित हैं। श्री अरविन्द भी ऐसे प्रमुख भारतीय दार्शनिक हैं, जो विकासवादी सिद्धान्त की व्याख्या 'प्रकृति के विकासात्मक प्रत्ययक ं रू पम ं क रतेह ै।उ नकेअ नुसार,प्र कृतिस दैव गत्यात्मक और विकासशील है, लेकिन इस गत्यात्मक विकास में कुछ ऐसे सनातन नियम अन्तर्भूत हैं, जिनके आधार पर ही मनुष्य जाति का पूर्णता की ओर विकास होता रह सकता है। श्री अरविन्द की स्थापना है कि एक निरन्तर विकास प्रक्रिया में रत होने के कारण हमारे जीवन के नियमों की भी दो कोटियाँ हो जाती हैं हमारी वर्तमान वास्तविकता का नियम तथा हमारी सम्भावना का नियम। इसका तात्पर्य, श्री अरविन्द के अनुसार, यह है कि प्रकृति का आदर्श प्रत्येक व्यक्ति और सभी व्यक्तियों के सम्पूर्ण सामर्थ्य का पूर्ण परितोष तक विकास है। इस नियम की अवहेलना के कारण हमारे जीवन में परस्पर संघर्ष, विचारों-भावनाओं तथा हितों का विरोध और कई प्रकार के युद्धों या लूट, यहाँ तक कि दमन और विनाश द्वारा भी अपना लक्ष्य साधने का प्रचलन दिखायी पड़ता है। श्री अरविन्द की व्याख्या में प्रकृति का वास्तविक नियम विविधता को बल देने वाली एकता है। प्रकृति का यह गुप्त सन्देश इसी बात से उजागर है कि एक ही नियम से संचालित होने के बावजूद प्रकृति का आग्रह अनन्त वैविध्य या भिन्नता पर है। उसकी मानव योजना एक है, लेकिन कोई भी दो मनुष्य अपनी बनावट में बिलकुल समान नहीं होते। मानव-प्रकृति मोटे तौर पर समान है, लेकिन, किन्हीं भी दो मनुष्यों का स्वभाव, चारित्रिकताएँ, विचार और मनोवैज्ञानिक बनावट पूरी तरह एक सरीखे नहीं होते। जीवन अपनी आधाारभूत

महात्मा गांधी का 'स्वराज' शेष समाज अथवा सृष्टि से कटा हुआ नहीं है, उसमें वैयक्तिक वैविध्य का सम्मान तो है, किन्तु समता और एकत्व की उपेक्षा कतई नहीं। जब वह कहते हैं कि 'स्वराज' का तात्पर्य सभी प्रकार के संयमों से मुक्ति नहीं है, बल्कि आत्मनिग्रहमय स्वशासन है, और सबका स्वराज संयुक्त होकर जनता का स्वराज बनता है, स्पष्ट हो जाता है कि यह 'स्वराज' आत्म के सर्वात्म तक उत्कर्ष का माध्यम है।

योजना और सिद्धान्त में एक है- जहाँ तक कि वनस्पति एवं अन्य जीव भी मनुष्य के मान्य कुटुम्बी हैं-लेकिन जीवन की यह एकता अनन्त वैविध्य को स्वीकार और प्रोत्साहित करती है। व्यक्तियों के समान मानव समुदाय भी अपनी विशिष्ट चारित्रिकता, रूप-भेद सिद्धान्त और प्राकृतिक विधि विकसित करते हैं। विविधता का सिद्धान्त स्वतन्त्र अन्तस्संबंधों में बाधा नहीं है, वह जीवन मात्र की समग्रता के विरोध में नहीं जाता। श्री अरविन्द एकता और विविधता के बीच इस संगति में ही जीवन और उसके विकास के रहस्य को अन्तर्निहित मानते हैं।

एकता और विविधता की इस संगति के आधार पर विकसित अहिंसामूलक व्यवस्था का नाम ही 'स्वराज' है। श्री अरविन्द भी मानते हैं कि मानव-समाज उसी हद तक वास्तविक विकास कर पाता है, जिस हद तक उसके कानून स्वतन्त्रता की सन्तान होते हैं। वह अपनी पूर्णता को तभी पहुँच सकता है, जब मनुष्य अन्य मनुष्यों के साथ तात्त्विक स्तर पर एकत्व का बोध कर सके और उसके समाज का स्वत: स्फूर्त नियम उसके आत्मानुशासित स्वातंत्र्य का बाह्य रूप हो।

'आत्मानुशासित स्वातंत्र्य' - श्री अरविन्द का यह प्रत्यय महात्मा गांधी के 'स्वराज' की सर्वाधिक सटीक परिभाषा है, जो 'स्वराज' को जीवन मात्र की संगति में ला देती है। आत्मानुशासन को हीग ांधीजी' आत्मनिग्रह'क हतेह ैअ ौर वही उनके लिए स्वशासन है: 'अपने मन पर राज्य। मनोवेगों से ऊपर उठने पर ही व्यक्ति अपने वास्तविक 'स्व' की सिद्धि कर सकता है।

'स्वराज' के तत्त्वमीमांसीय आधाार 'अपृथक् भिन्नता' को मनोवैज्ञानिकों द्वारा भी समर्थन मिलता है। प्रसिद्ध मनोचिकित्सक काल गुस्ताव युंग की धारणा है कि मानव मात्र पर लागू सर्वनिष्ठ मनोविज्ञान को अलग-अलग व्यक्तियों पर लागू नहीं किया जा सकता। युग का कहना है कि चेतना अस्तित्व की पूर्व शर्त है, क्योंकि विश्व का अस्तित्व उतना ही है, जितना वह चित्त के द्वारा विचारित और अभिव्यक्त होता है। ''इस चेतना का वाहक व्यक्ति है.... यदि चित्त को एक सर्वोपरि आनुभविक महत्त्व देना अनिवार्य हो, तो वह महत्त्व व्यक्ति को भी देना होगा, जो चित्त का वाहक है।'' युंग मानते हैं कि मनोविज्ञान के सिद्धान्त सर्वनिष्ठ होते हैं, लेकिन केवल उनके आधार पर किसी वैयक्तिकता को नहीं पाया जा सकता। उन्हीं के शब्दों में: ''सैद्धान्तिक मान्यताओं के आधार पर कोई आत्मज्ञान सम्भव नहीं है, क्योंकि आत्मज्ञान का आलम्बन व्यक्ति है- एक सापेक्ष अपवाद तथा एक अनियमित तथ्य। इसलिए, कोई वैश्विकता और नियमितता व्यक्ति की चारित्रिकता नहीं हो सकती-सिवा उसकी अद्वितीयता के। उसे किसी पुनरावर्त्तक इकाई की

तरह नहीं, बल्कि एक ऐसी अद्वितीय और विलक्षण इकाई के रूप में समझा जाना है, जिसे अन्ततः किसी अन्य चीज के सन्दर्भ और तुलना में नहीं जाना जा सकता। लेकिन, साथ ही, मानव को एक प्रजाति के सदस्य और एक सांख्यिकीय इकाई के रूप में ही वर्णित किया जा सकता है। अन्यथा, उसके बारे में कोई सामान्य धारणा नहीं व्यक्त की जा सकती। इस उद्देश्य के लिए उसे एक तुलनात्मक इकाई के रूप में समझना होगा। इसका परिणाम, सन्दर्भ के अनुसार वैश्विक स्तर पर वैध मानव-विज्ञान अथवा मनोविज्ञान होता है, जिसमें मानव का अमूर्त चित्रण होता है-एक औसत इकाई जिसमें से सारे वैयक्तिक लक्षण हटा दिये गये हैं। लेकिन, मानव को समझने के लिए ये वैयक्तिक लक्षणाएँ ही सर्वोच्च महत्व की होती है। यूंग, साथ ही, यह भी मानते हैं कि ''मानव के ज्ञान तथा मानव प्रकृति में अन्तर्दृष्टि के लिए सामान्य मानवत्व से सम्बन्धित सभी प्रकार के ज्ञान की आवश्यकता होगी और इस संघर्ष का समाधान किसी एक को अपनाने छोड़ने के माध्यम से नहीं, बल्कि दुरुस्त विचार-प्रक्रिया से ही हो सकता है, एक चीज करते हुए दूसरे को भी आँख से ओझल न होने देना। इसका सीधा सामाजिक प्रतिफलन यही है कि मनुष्य के 'स्व' का निर्धारण सर्वनिष्ठता के साथ उसकी स्वलाक्षणिकता के आधाार पर ही हो सकता है तथा वह, साथ ही, अपने 'स्व' को 'सर्व' से पृथक् करके नहीं पा सकता। युग भी यह 'से तो मानते ही हैं कि एक सामाजिक प्राणी के रूप में मानव समुदाय से जुड़े बिना दीर्घावधि तक नहीं रह सकता, पर साथ ही, उसे 'समूह में विलीन होने की अपरिहार्यता' से भी बचना है।

नव-पलायन वादी माने जाने वाले एरिक फ्क्रम हार्नी और सल्लिवन जैसे मनोविश्लेषकों ने मानव जीवन में जैविक आवश्यकताओं और आवेगों का महत्त्व स्वीकार करतेह ुएभ ीउ न्हेंम ानवीयअ ाचरणक ोप्र भावितक रने वाली सर्वाधिक प्रबल प्रवृत्ति नहीं माना। मनोविश्लेषण के क्षेत्र में अपने अनुभवों और अध्ययन के आधार पर फ्क्रम का निष्कर्ष है कि ऐतिहासिक विकास की प्रक्रिया में जिन मानवीय प्रवृत्तियों-यथा स्वतन्त्रता, प्रेम, सामाजिकता आदि-का विकास हुआ है, वे ही उसकी जीवन-शैली और आचरण को प्रभावित करने वाली प्रेरक शक्तियाँ हैं- उन्हें किसी भी तरह जैविक आवेगों की अपेक्षा दूसरे दर्जे की प्रवृत्तियाँ नहीं माना जा सकता। एरिक फ्क्रम सामाजिकता के साथ स्वतन्त्रता को भी मानव की मूलवृत्ति के रूप में स्वीकार करते हैं। स्वतन्त्रता सामाजिकता की भावना से युक्तम ानव-प्राणीक ी' स्वच ेतना'क ीअ नुभूतिह ैअ ौर समाज में रहते हुए इस 'स्व चेतना' की सन्तुलित सिद्धि न होप ानेक ेक ारणह ीव ैयक्तिकअ ौरस ामूहिकस् तरप र मानसिक असन्तुलन पैदा होता है, जो मनोविक्षोभ का मूल कारण बन जाता है। इस प्रकार, एरिक फ्क्रम स्वतन्त्रता और सामाजिकता को, जो सामाजिक चिन्तन में मूल्य का दर्जार खतेह ैं,म नोविज्ञानक ेक्ष ेत्रम ेंम ानव-स्वभावक ी सहज वृत्तियों के रूप में स्थापित करते हैं। इन सहज वृत्तियों की असन्तुष्टि मानव के अपने अस्तित्व को असहनीय बना देती हैं। उनके अनुसार वर्तमान सामाजिक-राजनैतिक जीवन के बहुत से तनावों के मूल में यही कारण है। इसलिए, एरिक फ्क्रम 'धनात्मक स्वतन्त्रता' की बात करते हैं, जिसमें मानव अपनी स्वतन्त्रता को बनाये रखते हुए प्रेम, कर्म और अपनी भावात्मक, ऐन्द्रिक तथा बौद्धिक योग्यताओं की अभिव्यक्ति के माधयम से अपने को जगत् के साथ सहजतापूर्वकध नात्मकरू पस ेज ोड़स कताह ैअ ौरइ स प्रकार अपनी स्वतन्त्रता और व्यक्ति 'स्व' को खंडित किये बिना यह प्रकृति और अपने आपके साथ ऐक्य का अनुभव कर सकता है। 'स्वराज' इस 'धनात्मक स्वतन्त्रता' की सिद्धि ही तो है, जिसमें 'स्व' और समाज के बीच एक परस्परपोषी सम्बन्ध कायम होता है। प्रत्येक व्यक्ति का 'स्वशासन' सभी के 'स्वशासन' में पर्यवसित होता है. जिसे महात्मा गांधी 'जनता का स्वराज' कहते हैं।

(हिंदी के नाटककार, कवि, आलोचक नंद किशोर आचार्य केंद्रीय साहित्य अकादमी पुरस्कार सहित कई पुरस्कारों से सम्मानित है। अहिंसा दर्शन, गांधी विचार, मानवाधिकार, शिक्षा संस्कृति विचार पर इनकी अनेकों पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

संपर्कः

स्थायी पता- सुथारों की बाड़ी गुवाड़,
बीकानेर (राजस्थान)

विमर्श

कुछ कम प्रचलित घटनाएं

डा. वर्षा दास

2 अक्टूबर और 30 जनवरी के आगे-पीछे गांधीजी की प्रासंगिकता के बारे में कई व्याख्यान और परिसंवाद होने लगते हैं। बचपन से हम हमारी पौराणिक और समसामयिक कहानियों में सुनते आए हैं कि 'हीरो' ने 'विलेन' को मार डाला। उसे सराहते हैं। यह भी तो हत्या है। क्या वह सही है ? कोई भी मनुष्य सौ प्रतिशत बुरा या सौ प्रतिशत अच्छा नहीं होता।

गांधीजी समयातीत हैं और संपूर्ण विश्व के लिए प्रासंगिक हैं। उनके बारे में विश्व की प्राय: सभी भाषाओं में अनेक पुस्तकें अतीत और वर्तमान में लिखी जा चुकी हैं और भविष्य में भी लिखी जाएंगीं ।

अपनी आत्मकथा जिसे गांधीजी 'सत्य के प्रयोग' कहते हैं। उसके अंतिम प्रकरण में वे कहते हैं कि उनका जीवन 1921 से इतना अधिक सार्वजनिक हो गया है कि अब आत्मकथा के लेखन को आगे बढ़ाना उचित नहीं होगा।

गांधीजी के जीवन की महत्त्वपूर्ण घटनाओं के बारे में, उनके सत्याग्रह, अनशन, कारावास, कई प्रकार के प्रयोग, आश्रम, जीवन इत्यादि के बारे में हम सुनते आए हैं। पिछले दिनों मैंने अपने घर के निजी पुस्तकालय में गांधीजी के बारे में गुजराती में लिखी गई कुछ पुस्तकों में ऐसी घटनाओं के बारे में पढ़ा जो इतनी प्रचलित नहीं हैं। उनमें से कुछ को यहां साझा कर रही हूं।

गांधीजी के जीवन की महत्त्वपूर्ण घटनाओं के बारे में, उनके सत्याग्रह, अनशन, कारावास, कई प्रकार के प्रयोग, आश्रम, जीवन इत्यादि के बारे में हम सुनते आए हैं। पिछले दिनों मैंने अपने घर के निजी पुस्तकालयम ेंग ांधीजीक े ब ारे में गुजराती में लिखी गई कुछ पुस्तकों में ऐसी घटनाओं के बारेम ेंप ढ़ा ज ो इ तनीप्र चलित नहीं हैं। उनमें से कुछ को यहां साझा कर रही हूं।

एक समय ऐसा था जब गांधीजी खाने के बहुत शौकीन हुआ करते थे। आहार से संबंधित उनके प्रयोग तो काफी अर्से के बाद शुरू हुए थे। एक ही बारी में वे तीस 'पुरणपोली' (दाल से भरी हुई मीठी रोटी) खा जाते थे। और थाली भर के पकोड़े भी खा लेते थे। एक बार गांधीजी आश्रम की बहनों को उबले हुए आहार के गुणों के बारे में बता रहे थे। तब पास में बैठी हुई कस्तूरबा ने कहा, आप खुद कितने शौकीन थे और कितना खाते थे, वह भूल गए क्या? जो इन छोटी बहनों को और बच्चों को उबला हुआ खाने की सलाह दे रहे हो? यह सुनकर गांधीजी हंस पड़े और बोले, ''तुम ही मेरे खिलाफ इन बहनों का पक्ष लोगी तो ये बहनें क्या मेरी बात सुनेंगी?[1]

साबरमती आश्रम में गांधीजी ने आश्रमवासियों के साथ सोयाबीन का प्रयोग शुरू किया था। उन दिनों सोयाबीन के अद्‌भुत गुणों के बारे में अखबारों में बहुत लिखा जाता था। ऐसा भी कहा जाता था कि दूध के एवज

में सोयाबीन ले सकते हैं। गांधीजी सोयाबीन को अलग अलग तरीके से पकवाकर भोजन के समय परोसते थे। अन्य दलहनों की तुलना में सोयाबीन हजम होने में कठिन और स्वादिष्ट भी कम था। सोयाबीन का प्रयोग किसी को अनुकूल नहीं रहा, गांधीजी को भी नहीं ! इसलिए ही उस प्रयोग को छोड़ दिया। गांधीजी के चचेरे बड़े भाई थे-खुशालचंद गांधी। उनके बेटे छगनलाल और उनके बेटे प्रभुदास गांधी। उन्होंने दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह के समय के अपने संस्मरण 600 से भी अधिक पृष्ठों की पुस्तक 'जीवननुं परोढ़' में प्रकाशित किए थे। महेन्द्र मेघाणी ने उस पुस्तक के संक्षिप्त संस्करण को और भी संक्षिप्त करके 52 पृष्ठों की पुस्तिका का लोकमिलाप ट्रस्ट से प्रकाशन किया। उस पुस्तिका से ली गई एक घटना इस प्रकार है:

फीनिक्स में एक मुद्रणयंत्र था। उस में करीब डेढ़ मीटर के व्यास का लोहे का एक बड़ा पहिया था। उसे हाथ की ताकत से चलाना पड़ता था। पहिया अलग अलग लोग बारी बारी से घुमाते थे। गांधीजी की भी बारी होती थी। एक बार उन्होंने पहिया घुमाने के लिए प्रभुदास को अपने सामने खड़ा किया। वह तो गांधीजी के मुखारविंद को देखता ही रहा। उसे लगा कि गांधीजी से प्रश्न पूछने का, बातें करने का अच्छा अवसर था। तो उसने पहला प्रश्न पूछा,'' बापूजी,अ ापनेअ खबारम ेंअ पर्नो लए' हम'' हम'क यों लिखा है? वह तो आपने अकेले ने लिखा है''।

गांधीजी ने उत्तर दिया, ''जब अधिपति लेख लिखते हैं, तब एकवचन का प्रयोग नहीं करते हैं। बहुवचन में ही लिखते हैं। क्योंकि वह जो लिख रहा है वह केवल उसका विचार नहीं है, उसमें उसके अन्य साथियों के विचार भी सम्मिलित हैं।'' इतना कहकर बापूजी चुपचाप पहिया घुमाने लगे। प्रभुदास ने दूसरा प्रश्न पूछा, 'बापूजी, यह विज्ञापन के बारे में आपने क्या लिखा है? उन्होंने धैर्यपूर्वक समझाया, जिस चीज़ का इस्तेमाल हम नहीं कर रहे, और उसके उपयोग को गलत मानते हैं, उन्हें हमारा अखबार पढ़ने वाले इस्तमाल करना चाहे तो वह तो हमारी ही भूल कही जाएगी ना?'

अक्टूबर 1934 की यह बात है। कन्हैयालाल मुंशी की पत्नी लीलावती ने बापू को एक पत्र लिखकर बताया कि,''मुंशी दिन भर बड़ी चिंता-चिंता में रहते हैं, आदर्शों के लिए जीना या पैसे कमाने के लिए? इसी दुविधा में हैं। गांधीजी ने अपने जन्मदिन पर उन्हें यह पत्र लिखा था, जिन्हें कई आदर्श है वे कई देवताओं को पूजते हैं। उनका मन कैसे शांत हो सकता है ?... जो एक ही देव का पुजारी है, वह सदा संतुष्ट है। सदा सुखी है। वह यदि वकालत से मिलता है तो दुनिया की निंदा है। उसका आदर्श भी एक ही है। उसे एक ही सत्यनारायण का साक्षात्कार करना होता है। सहकर भी वह करना। वह आदर्श से विमुख रखता है तो भाड़ में जाए वह वकालत । वकालत फकीरी, कांग्रेस का सिंहासन, लोगों की निंदा और ऐसा बहुत कुछ यात्री का सामान है। स्तुति संभालनेवाला निंदा भी संभालता है और मालाबार हिल में विलास करता है। ऐसे में मुंशी को डर क्यों लग रहा है? कहां गई उसकी तीव्र बुद्धि और कहां गया उसका शास्त्रवाचन?

मन चंगा तो घर में गंगा। बाकी काशी की गंगा में नहानेवाले कई धूर्तों को देखा है।

महादेव देसाई ने अपनी डायरी में बताया है कि गांधीजी महात्मा थे लेकिन उनके साथियों के लिए सफर बड़ा मुश्किल होता था। भटनी स्टेशन पर क्या हुआ था उसे उन्होंने विस्तार से बताया है।

''भटनी स्टेशन पर तो हद हो गई. दर्शन नहीं हो पाए तो लोग चिढ़ गए और बहुत बिनती करने के बावजूद गाड़ी की पटरी पर खड़े हो गए। कई लोग कहने लगे कि दर्शन नहीं होंगें, तब तक हम गाड़ी को हिलने नहीं देंगें। नीचे उतर कर मैं उनके पैर पड़ा फिर भी वे हटने के लिए तैयार नहीं थे। आखिर मुझे गुस्सा आ गया और मैं उनको न कहने के शब्द कहने लगा। पर वे लोग कहते रहे कि 'भगवान के दर्शन करने आए हैं उसमें शर्म किस बात की?

ऐसी धांधली में गांधीजी कहां सो पाते। लेकिन वे चुपचाप लेटे रहे। हमने उम्मीद की थी कि भटनी के बाद थोड़ी शांति मिलेगी लेकिन वह उम्मीद भी व्यर्थ थी। फिर तो हरेक स्टेशन पर लोगों का हठाग्रह दिखा। एक स्टेशन पर गांधीजी थककर उठे। रात के करीब डेढ़ बजे का समय था। गांधीजी बिनती करने लगे, 'मेहरबानी करके आप लोग जाइए।इ तनीर ातक ोक योंप रेशानक रर हेह ो? उ नको उत्तर मिलता था जोर से किए गए हर्षनादों से....

गांधीजी ने फिर से बिनती की लेकिन सुने कौन? इस घटना के दौरान गांधीजी की सौम्य मूर्ति में जो विकृति हुई उसका वर्णन करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। मैं भी त्राहिमाम था। गांधीजी को क्रोधित स्थिति में इससे पहले मैंने कभी देखा नहीं था, इसलिए मैं तो कांप रहा था। अंत में उन्होंने अपना माथा पीटकर कहा, ''आपके पैर पड़ता हूं, आप दया करके यहां से हटिए ।'' लोगों का व्यवहार उदंडता की हद पार कर गया था। गांधीजी ने इस तरह जब तीन बार माथा पीटा तब जाकर लोग शांत हुए।

मेरी चिढ़ का अंत नहीं था। उस चिढ़ में मैंने गांधीजी के समक्ष असत्य बोलने की धृष्टता की, उसे यहां कबूल कर लेता हूं। बहुत सारे भक्तों को तो पता ही नहीं होता है कि 'महात्माजी' कौन हैं । थोड़े लोग डिब्बे में आ गए 'महात्माजी कौन है?' 'महात्माजी कौन है'? ऐसा पुकारने लगे। मैंने चिढ़कर कहा 'मैं हूँ' तो संतुष्ट होकर, प्रणाम करके नीचे उतर गए ! कहां मेरी धृष्टता और कहां उनका निर्मल प्रेम!

एक बार एक बहन ने गांधीजी को पत्र लिखकर बताया कि 'भाई की शराब पीने की बुरी आदत से अकुलाकरम ैसीन `उ नकोत ीन–चारथ ाप्पड़म ारि दए! इसका उत्तर देते गांधीजी ने लिखा–

''उन्होंने थप्पड़ मारे वह अच्छा किया। इसमें हिंसा नहीं थी, लेकिन शुद्ध प्रेम था। एक बालिका ने गांधीजी को लिखा–बापू, हमें पिछले जन्म का क्यों याद नहीं रहता है? बापू ने उसे लिखा,'' हमें इस जन्म का ही सब कुछ कहां याद रहता है? और याद रहे तो हम पागल हो जाएंगे।

किसी चीज़ को याद रखकर उसमें से जो कुछ लेना हो वह ले लें। बाद में उसे भूल जाएं तो क्या हरकत है ? उल्टा, लाभ ही है।

गुजराती साहित्य के एक मूर्धन्य कवि हैं–उमाशंकर जोशी। उन्होंने 'तोल्स्तोय और गांधी' के बारे में एक परिचय पुस्तिका लिखी है। उसमें बताया है कि तोल्स्तोय कीप ुस्तक' किंगडमअ ॉफग ॉडइ ज़ि वदिइ नय ू'य ानि ईश्वर का राज्य तुम्हारे हृदय में है, गांधीजी की प्रिय पुस्तक थी। कारण, तोल्स्तोय अपने युग के लिए अहिंसा के बहुत बड़ेप्र वर्तकथ ो।य हप ुस्तकग ांधीजीक ीए कस ाथीक ` समान थी। वर्ष 1908 में जब गांधीजी जेल में थे, उस समय की एक मार्मिक घटना का वर्णन उस परिचय पुस्तिका में दिया गया है।

'गांधीजी को गवाही देने के लिए जेल से अदालत में ले जा रहे थे। गांधीजी ने दरोगा से हाथ में एक किताब रखने की इजाजत मांगी। उसे लगा कि गांधी को हथकड़ी से शर्म आ रही है। इसलिए वह उसे किताब के पीछे ढंकना चाहता है। उसने हथकड़ी न दिखे उस तरह किताब पकड़ा दी। गांधी को हंसी आई। हथकड़ी तो उनके लिए गौरव की बातथ ी।स ंयोगवाङ्व हक िताब' तोल्सतोय'ि लखित' द किंगडम् आफॅ गॉड इज़ विधिन यू' थी। गांधी ने सोचा, कैसा योगानुयोग है।

विजया, जिन्हें हम मनुभाई पंचोली दर्शक की पत्नी विजया पंचोली के नाम से जानते हैं। उन्होंने एक बढ़िया घटना का वर्णन किया है। गांधीजी के साथ उनके सवाल–जवाब की बात है। वे गांधीजी के पास गई थीं और उनसे कहा था कि वे उनके पास आश्रम में रहना चाहती हैं। उन्हीं के शब्दों में यह संवाद है।

बापूजी : मेरे पास क्यों आना है?

मैं : आपके जीवन से कुछ ले सकूं तो लेने दोगे।

बापूजी : कई दो वर्ष रहने का सोचकर आते हैं और दो महीने में चले जाते हैं। और दो महीने रहने के लिए आने वाले दो–पांच दिनों में ही चले जाते हैं। आश्रम का जीवन कठिन होता है।

मैं : उस कठिन जीवन को जीने के लिए ही मुझे आपके पास आना है और आपके पास रहना है। कम से

कम 6 महीने और ज्यादा से ज्यादा दो साल रहने की इच्छा है।

बापूजी: सूरज के पास रहें तो क्या होता है?

मैं: जल के मर जाते हैं।

बापूजी : तो मेरे पास भी ऐसा ही है। इससे अच्छा है कि दूर रहकर मेरे लेखों में से जो मिले उसी से संतोष मान लो ।

मैं: मुझे ऐसा नहीं करना है। आपके पास ही रहना है।

बापूजी : क्या काम करोगी?

मैं : मुझे जो आता है वह सब ।

बापूजी : मगनवाड़ी से चलकर डाक ले आओगी?

मै : हां।

बापूजी: खोटा सिक्का तो नहीं निकलोगी ना ?

मैं: देखिए, खोटे को ही आपके पास आने की ज़रूरत पड़ती है सच्चा बनने के लिए। इसलिए आप कहीं सच्ची मानकर नहीं रखना। खोटी मानकर ही गढ़ना ।

बापूजी : मैंने सेवाग्राम आश्रम में बहनों को रखने के लिए मना किया है, लेकिन तुम्हें ना नहीं कह सकता। तुम आओ। आखिर में बा की अनुमति ले लो। बा अगर ना कहे तो नहीं आना है, क्योंकि आश्रम में बहने बहुत लड़ती हैं और बा के ऊपर उसका काफी बोझ रहता है।

मैं: मैं लडूंगी नहीं ।

फिर मैं बा से मिली। बा से पूछा कि मुझे वहां आना है। पू. बा मुझे छावनी में थीं और फिर जेल में थी तब से जानती थीं इसलिए उन्होंने मुझे तुरंत कहा कि अगर तुम आना चाहती हो तो बहुत ही अच्छा।

आखिर विजया बहन आश्रम में आ गई। पू. बा और बापू को प्रणाम किया। बापू ने कहा, 'देखो, अब से जब तक तुम यहां रहोगी तब तक मैं तुम्हारी मां हूं, तुम्हारा बाप हूँ । तुम्हारी बहन-भाई सब कुछ मैं ही हूं, ऐसा समझना । डरना नहीं।'

एक बार विजया को कपड़े के गिलाफ में रुई की जगह अखबारों की दो-तीन तहें करके अंदर डालकर गुदड़ी बनाने का कहा गया। कागज़ की तीन-चार तहों में से सूंई निकालना थोड़ा कठिन था तो सूंई टूट गई। वे गई बापू के पास और दूसरी सूंई मांगी। बापू ने कहा कि सूंई तो उसे अपने पिता से मंगवानी पड़ेगी। हाज़िरजवाब विजया ने तुरंत कहा कि सूंई तो पिता से ही मांग रही हूं ना ?

बापू ने ही तो उसे कहा था कि मैं तुम्हारी मां हूं, तुम्हारा बाप हूं।

एक बार जगन्नाथपुरी में कांग्रेस का अधिवेशन होने वाला था। उस समय कुछ नेताओं ने पुरी और कोणार्क के मंदिरों की दीवारों पर रतिक्रीड़ा के शिल्पों की ओर गांधीजी का ध्यानाकर्षण किया। उन नेताओं का मानना था कि रतिक्रीड़ा के शिल्प अश्लील थे, इसलिए अधिवेशन से पहले उन्हें पलस्तर से ढक देना चाहिये । गांधीजी को भी शायद लगा होगा कि उनकी बात ठीक थी। एक उद्योगपति उन शिल्पों को पलस्तर से ढकने का खर्च करने के लिए तैयार थे। लेकिन गांधीजी ने इस विषय में नंदबाबू की राय लेना चाहा। नंदबाबू ने तुंरत बताया कि ऐसी हरकत करना गलत होगा। इससे अत्यंत उमदा कलाकृतियां नष्ट हो जाएंगी। ये प्राचीन शिल्प देश की अमूल्य सांस्कृतिक विरासत है, यह बात गांधीजी समझ गये और पलस्तर का प्रस्ताव नामंजूर हो गया। गांधीजी पहले भी कह चुके थे कि नंदबाबू कलाकार हैं, वह स्वयं नहीं। फिर भी गांधीजी की सौंदर्य-रुचि काफी सहज और सूक्ष्म थी। पहले वह रतिक्रीड़ा के शिल्पों को ढकने के लिए सहमत हो गये थे। उसका कारण आम जनता को गलत प्रभाव से बचाने का रहा होगा। लेकिन बाद में जब नंदबाबू ने कलासौंदर्य की बात की तो उतनी ही सरलता से गांधीजी ने अपना विचार बदल दिया ।

अत: गांधीजी के सौंदर्य शास्त्र की अग्रिमता की सूची में मानवहित सबसे ऊपर है। उसके बाद है कृति का सौंदर्य और उसकी उपयोगिता, स्वदेशी और स्वरोजगार ।

(लेखिका नेशनल गांधी म्यूजियम की पूर्व निदेशक हैं।)

मैं आज तक जिंदा पड़ा हूँ....

प्रो. मनोज कुमार

हमअ पनेम हापुरुषोंक ाज न्मदिनक योंम नातेह ैं?क ैसेम नातेह ैं? जन्मदिन मनाने का उद्देश्य क्या है? हमारी पीढ़ी उनसे क्या सीखेगी? कई सवाल हमारे मन में स्वाभाविक उठता है। ऐतिहासिक महापुरुषों का जन्मदिन धार्मिक उत्सवों की तरह मनाने का रिवाज रहा है। गांधीजी का जन्मदिन किन अर्थों में मनाया जाना उचित है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने दो अक्टूबर को अहिंसा दिवस घोषित किया है। सरकारी और गैर सरकारी स्तर पर आयोजनों की कमी नहीं है। सवाल यह है कि सिद्धांत को व्यवहार में उतरने वाले प्रयोगकर्ता का जन्मदिन किस रूप में मनाया जाना उचित है। गांधीजी जब जीवित थे तब उन्होंने अपने जन्मदिन को किस रूप में मनाया, यह हमारे लिए महत्वपूर्ण हो जाता है।

2 अक्टूबर 1944 को हिंदू के प्रतिनिधि के द्वारा यह पूछे जाने पर कि इस शुभ दिन को देश के लिए क्या वे कोई संदेश देना चाहेंगे, उन्होंने कहा किम ैं ए ेसेअ वसरोंप रस देशद ेनेक ाअ ादिन हींह ूं।(हिंदू3 अ क्टूबर 1921) इसी दिन सेवाग्राम में कस्तूरबा स्मारक न्यास की बैठक में उन्होंने कहा कि बरसों से सारे भारत के लोग में मेरा जन्मदिन भारतीय और अंग्रेजी दोनों पंचांगों के अनुसार मनाने का रिवाज पड़ गया है। दोनों ही तिथियों के बीच पड़ने वाली अवधि को भी मेरे जन्मदिन पर मनाए जाने वाले तिथियों में शामिल कर लिया जाता है (सम्पूर्ण गांधी वाग्मय खंड 78 पृष्ठ 164 166) 2 अक्टूबर 1932 को येरवडा मंदिर से कस्तूरबा गांधी को पत्र में गांधी लिखते हैं कि अच्छा किया जो आपने मुझे याद किया। (खंड 97 पृष्ठ 180) अक्टूबर 1919) को भगिनी समाज द्वारा गांधी जी के 50वीं वर्षगांठ पर आयोजित सार्वजनिक सभा में गांधी ने कहा कि मेरे जन्म दिवस पर कई भाइयों और बहनों ने कुछ ना कुछ ऐसा काम किए हैं, जो मुझे पसंद है, जब-जब इस तरह का समारोह होता है तो मैं उदगार प्रकट करता हूं कि किसी व्यक्ति के प्रति प्रेम हो तो उस आदर और प्रेम को प्रदर्शित करने का सबसे अच्छा तरीका यही है कि हम सदैव उसका अनुसरण करें। उन्होंने कहा कि मेरे जन्म दिवस के उत्सव का मूल उद्देश्य तो यह है कि जो कुछ भी मेरे जीवन में अच्छा दिखाई देता है उसे स्वीकार कर लें ।(खंड 91 पृष्ठ 201) इस सभा में गांधी जी को 23000 रुपए की थैली दी गई थी। इसी

2 अक्टूबर 1944 को हिंदू के प्रतिनिधि के द्वारा यह पूछे जाने पर कि इस शुभ दिन को देश के लिए क्या वे कोई संदेश देना चाहेंगे, उन्होंने कहा कि मैं ऐसे अवसरों पर संदेश देने का आदि नहीं हूं। (हिंदू 3 अक्टूबर 1921) इसी दिन सेवाग्राम में कस्तूरबा स्मारक न्यास की बैठक में उन्होंने कहा कि बरसों से सारे भारत के लोग में मेरा जन्मदिन भारतीय और अंग्रेजी दोनों पंचांगों के अनुसारम नानेक ाि रवाजप ड़ग या है। दोनों ही तिथियों के बीच पड़ने वाली अवधि को भी मेरे जन्मदिन पर मनाए जाने वाले तिथियों में शामिल कर लिया जाता है।

सभा में उन्होंने कहा कि आप लोगों ने मेरे जन्मदिन पर जो कुछ किया है उसके लिए मैं आप लोगों का कृतज्ञ हूं इस रकम को मैं बहुत सोच विचार कर भारतीय स्त्री समाज की दशा सुधरने के संबंध रखने वाले किसी काम में खर्च करूंगा (खंड 16 पृष्ठ 205 से 208, इंडियन रिव्यू अक्टूबर 1919) 2 अक्टूबर 1944 को सेवाग्राम में कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक निधि के सदस्यों और संग्रह कर्ता की बैठक में सरोजिनी नायडू ने इन्हें 80 लाख की थैली भेंट की। वर्धा में निषेधज्ञा लागू थी। इन्होंने हिंदुस्तानी में बैठक को संबोधित किया, उन्होंने कहा कि यह निधि एकव ृद्ध,अ शिक्षितअ ौरग्ामीणम ानसिकताव ालीस् त्री की याद में इकट्ठी की गई है । इसे गांव के बच्चों और औरतों के कल्याण के लिए महिला कार्यकर्ताओं के माध्यमस ेख ार्चा कयाज ाएगा।उ न्होंनेय हभ ीक हाा क हिंदुस्तान में उन्हें लाखों करोड़ों रुपए भीख में मिल सकते हैं लेकिन उससे प्रगति नहीं हो सकती, इसका यह अर्थ बिल्कुल नहीं है कि पैसा जरूरी नहीं है। भेंट के बारे में उन्होंने कहा कि यह कम नहीं अकूत है, स्वेच्छा तथा शुभकामनास ेि दयाद ानज रूरप ल्लदाईह ोगाय हउ नके लिए अरबों रुपए के समान है। (खण्ड 91 पेज 201)

1944 को ही अपने जन्मदिन पर हिंदू के प्रतिनिधि को उन्होंने हंसते हुए कहा था कि मैं 125 वर्ष जीना चाहता हूं। (संपूर्ण गांधीवांग में 125 वर्ष जीने की बात 40 जगह पर है) लेकिन पर्णकुटी पुणे में मालवीय जी का जो तार आया है उसमें उन्होंने मेरे सतायु होने की कामना कर मेरी आयु 25व र्षक मक रद ी।ब नार्डस ाक ाभ ीस ंदेशअ ायाहै उन्होंने संदेश दिया है कि वह गांधी जी को जन्मदिन की शुभकामनाएं नहीं देंगे। इस पर गांधी जोर से हंसे और बोले यह हुई ना कोई बात। वे लिखते हैं की कुछ साल पहले तक मुझे नहीं पता था कि मेरा भी जन्मदिन होता है। (खंड 78 पृष्ठ 163)

30 सितंबर 1929 को गांधी लखनऊ से आजमगढ़ के लिए रवाना होते हैं गुजराती कैलेंडर के अनुसार गांधी जी का जन्मदिन 1929 में 30 सितंबर को ही पड़ता था। आजमगढ़ से ही एक व्यक्ति को पत्र में उन्होंने लिखा कि अपने जन्मदिन आदि की विशेषता मेरे मन से बुझ गई है। बहुत से तार आए हैं कुछ तो बहुत सुंदर है जाने क्या है कि उसका मेरे मन पर कोई असर नहीं होता, इतना गौर किया कि जन्मदिन पर सोमवार यानी मौनबार था। 2 अक्टूबर को जौनपुर की ट्रेन लेने के लिए उन्हें 1 बजे रात्रि ही जगना पड़ा (खंड 92 पृष्ठ 93)। 1 अक्टूबर 1919 को मुंबई के गवर्नर के निजी सचिव को तार भेज कर अहमदाबाद से . 800000 वसूलने के आदेश का विरोध किया। उसी दिन श्रीमती एनी बेसेंट की 73 भी वर्षगांठ पर मुंबई में आयोजित अभिनंदन समारोह की अध्यक्षता गांधी जी ने की उनका भाषण मुंबई क्रॉनिकल में 2 अक्टूबर और न्यू इंडिया में 4 अक्टूबर 1919 को प्रकाशित हुआ। उस सभा में उन्होंने 1889 में लंदन में एनी बेसेंट द्वारा दिए गए भाषण का जिक्र किया था ''मेरी कब्र पर केवल इतना लिख दिया जाए कि यह महिला सत्य के लिए जीवित रही और सत्य के लिए मरी''। 1945 में रविंद्र नाथ ठाकुर के निमंत्रण पर तान यून शान भारत आए थे। इन्होंने विश्व भारती में चीन भारत अध्ययन विभाग तथा बाद में चीन भारत संस्कृतिक संघ का संगठन बनाया, को पुणे से 2 अक्टूबर 1945 को अंग्रेजी में गांधी ने तार भेजा ''संपूर्ण चीन को मेरी शुभकामनाएं स्नेह''। (खण्ड 81 पृष्ठ 324) उसी दिन एक पत्र देश भक्त के संबोधन से लिखते हैं क्या अब वह समय नहीं आ गया है कि मैं हिंदुस्तानी में लिखूं अगर जवान लोग नहीं बक्सते तो हम तो एक दूसरे को बक्से।

एक महत्वपूर्ण बात जो 1920 में 29 सितंबर को शिक्षकों की सभा में उन्होंने कहा कि किसी समय मैं खुद भी शिक्षक था और अभी भी यह दावा किया जा सकता है कि मैं एक शिक्षक ही हूं। अपने बड़े अफसर की धमकियों से शिक्षक घबराते हैं अगर शिक्षकों में वीरता या बहादुर आ जाए, वे सच्ची राष्ट्र शिक्षा देने लगे तो, आकाश से देवता भी देखने आएंगे और रूपों की बरसात करेंगे। 2 अक्टूबर 1921 को नवजीवन में प्रकाशित एक लेख ''मेरी लंगोटी'' शीर्षक से छपी है में गांधी लिखते हैं कि मैंने अपने जीवन में जो भी परिवर्तन किए हैं सभी किसी न किसी महान प्रसंग को लेकर ही किया सभी परिवर्तन मैंने इतना सोच विचार कर किया है कि शायद ही पछताना पड़ा हो, ऐसे परिवर्तन मैंने तभी किया जब उन्हें किए बिना मैं रह ही नहीं सकता था। ऐसा ही परिवर्तन मदुरई में मैंने पोशाक के बारे में किया। खुलना के अकाल पीड़ितों की ओर से ताना

मारते हुए उनसे कहा गया कि लोग अन्न और वस्त्र के अभाव में मर रहे हैं और आप कपड़ों की होली जला रहे हैं। यो ताने में कोई सच्चाई नहीं थी। यहां कुछ करना जरूरी भी नहीं था, एक ही जमींदार में उनके दुख दूर करने का सामथ्र्य था। गांधी कहते हैं कि उन्हें लगा कि लंगोटी में ही काम चलना चाहिए, कुर्ता, धोती खुलना के लोगों के लिए भेज देना चाहिए, लेकिन उन्होंने अपने पर नियंत्रण किया उन्हें इसमें अहंकार का भाव दिखा। दूसरा प्रसंग तब आया जब उनके साथी मोहम्मद अली को उनके सामने ही गिरफ्तार कर लिया गया। उस समय कुर्ता और टोपी उतार देने का मन हुआ लेकिन इसमें भी इन्हें दिखावटीपन का दोष दिखा। तीसरा प्रसंग मद्रास यात्रा के दौरान आया, लोग उनसे कहने लगे कि उनके पास खादी खरीदने का पैसा नहीं है, अगर वे अपना विदेशी कपड़ा जला देंगे तो खादी कहां से लाएंगे। गांधी को इसमें सत्य का आभास हुआ। मौलाना आजाद, राजगोपालाचारी आदि से राय किया उन्हें अपना दुख सुनाया और कहा कि अब मुझे सिर्फ लंगोटी पहनकर ही रहना चाहिए। उन्होंने कहा कि मेरा अनुसरण सभी को असंभव नहीं तो कठिन जरूर लगेगा। लोग मुझे पागल मानने लगेंगे। चार दिनों के मंथन के बाद वे कहने लगे कि खादी ना मिले तो आप लंगोटी पहनकर ही रहिए। अक्टूबर के अंत तक सिर्फ लंगोटी पहनकर रहने का उन्होंने निर्णय कर लिया। 27 सितंबर को वे मदुरई पहुंचे दूसरे दिन बुनकरों की बैठक में सिर्फ लंगोटी पहन करग ए।उ न्होंनेक हा िकभ ारतक ेक रोड़ों िकसानक ी पोशाक तो लंगोटी ही है।

2 अक्टूबर 1944 को हिंदू के प्रतिनिधि के द्वारा यह पूछे जाने पर कि इस शुभ ि दनक ेद ेशक े ि लए क्या वे कोई संदेश देना चाहेंगे, उन्होंने कहा कि मैं ऐसे अवसरों पर संदेश देने का आदि नहीं हूं। (हिंदू 3 अक्टूबर 1921) इसी दिन सेवाग्राम में कस्तूरबा स्मारक न्यास की बैठक में उन्होंने कहा कि बरसों से सारे भारत के लोग में मेरा जन्मदिन भारतीय और अंग्रेजी दोनों पंचांगों के अनुसार मनाने का रिवाज पड़ गया है। दोनों ही तिथियों के बीच पड़ने वाली अवधि को भी मेरे जन्मदिन पर मनाए जाने वाले तिथियों में शामिल कर लिया जाता है

1921 में काफी संदर्भ भरे हुए हैं। एक अक्टूबर 1921 को गांधी बेलारी में थे। जहां उन्हें हिंदू मुसलमान के मतभेद की खबर मिली। आंध्र और कर्नाटक के प्रश्न पर भी मतभेद था। बहनों से उन्होंने कहा कि मैं अपने जन्म दिवस पर आपको क्या संदेश भेजूं? मेरे जन्मदिन से आपका क्या संबंध हो सकता है? मुझे भारत की स्त्रियां क्यों जानती है? उन्होंने कहा कि वह मुझे उनके प्रति प्रेम के कारण जानती है, मुझे स्त्रियों की शील रक्षा प्यारी लगती है। यदि हम स्त्रियों को शिक्षा दें तो वह अपने सम्मान की रक्षा कर सकती हैं। इसमें विद्वत की नहीं चरित्र की जरूरत है। आप बाहर जाने वाले करोड़ रूपयो को भारत में बचा सकती हैं और बहनों की भी रक्षा कर सकती हैं। जीवन को आदर्शमय बनाने और ढेर पढ़ने की अपेक्षा कम पढ़ने और आचरण में लाने पर बल दिया। उन्होंने कहा कि भारत ने आदर्श अभी नहीं भूलाया है। हम हिंदू हो या मुसलमानस भीअ पनेप ूर्वजोंक ेउ त्तराधिकारीह ैं।(खंड 21 पृष्ठ 236 से 238 नवजीवन गुजराती 6 अक्टूबर 1921) इसी संदेश में उन्होंने कहा कि जब छापेखाने नहीं थे, भाषण देने की सुविधा भी कम थी जब हम लोग आज की तरह 24 घंटे में हजार मिल के बजाय 24 मिल भी मुश्किल से यात्रा कर सकते थे तब अपने विचारों के प्रचार का एक ही मुख्य साधन माना जाता था वह साधन था अपना आचरण। यह समाज मौन रहकर कार्य करें यही आपसे मेरी नम्र प्रार्थना है।

2 अक्टूबर 1921 के नवजीवन में ''धर्म और अधर्म'' तथा ''मद्रासी'' नाम से अलग-अलग लेख छपे हैं। धर्म अधर्म शीर्षक लेख में उन्होंने एक ऐसे पत्र का जिक्र किया है जो युद्ध में गांधी की सफलता चाहते थे और सहयोग के भी कायल थे। पत्र में उन्होंने लिखा था कि विद्यार्थियों को स्कूल और कॉलेज छुड़वाने से बुरा असर नहीं होगा? दूसरा मां बाप के प्रति अनादर का भाव पैदा होगा तीसरा आपके साथ सभी लोग आपके जैसे हैं क्या? बहुत सारे लोग ढोंगी, मतलबी और घमंडी हैं। पत्र में उन्होंने लिखा था कि काश मैं आपको अपनी आंख दे सकता और दिखा सकता की दुनिया की तमाम सफेद चीज दूध नहीं होती। गांधी ने उत्तर में लिखा कि राक्षसी राज्य के स्कूलों में पढ़ना पाप है। जहां तक मां-बाप के अनादर का सवाल है गांधी लिखते हैं कि 16 साल के नीचे की बात

नहीं है और उसके बाद निर्णय की शक्ति आ जाती है। जहां मां-बाप खुद पतित हो व्यभिचार हो वहा जवान लड़के लड़कियों को क्या करना चाहिए? क्या घूसखोर मां बाप के घुस के पैसों पर निर्वाह करना चाहिए। पाप के कुएं में तैरना तो चाहिए डूब मरना नहीं चाहिए। तीसरे सवाल के जवाब में कहा कि धर्मिक युद्ध में अगर पाखंड अपनी जड़ जमा ले तो धर्म कलंकित होगा और जनता की भी हानि होगी अगर ऐसा हुआ तो लोग धर्म से दूर भागेंगे या धर्ममांधता को ही धर्म मानकर बैठे रहेंगे। उन्होंने कहा कि पाप का जोखिम उठाने से डरने वाला पापी पुण्यवान का बेस बना कर रहता है और दूना पाप कमाता है। अपनी नास्तिकता को छिपाने के लिए अपना पेट पालने के लिए लंबा टीका लगता है और उतना ही चंदन नष्ट करता है इतना ही नहीं पाप में और वृद्धि करता है। वे कहते हैं जब वे देखेंगे कि उनके चारों ओर ढोंग ही ढोंग है तो वे आंदोलन को छोड़कर निकल जाएंगे, क्योंकि पाखंडी मनुष्य असहयोगी नहीं होता (खंड 21 पृष्ठ 239 से 241)। उसी दिन के दूसरे लेख में मद्रासियों को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि आप में सहन का समर्थ है, लेकिन आप स्वदेशी के प्रचार में पिछड़े हुए हैं। राजगोपालाचारी के रहते भी उन्हें मद्रास में निराशा हुई है यहां अंग्रेजी जानकार मद्रासी और सिर्फ तमिल जानकार मद्रासियों में काफी अंतर है। अपने तमिल को लगभग छोड़ दिया है। बंगालियों को भी अंग्रेजी का मोह है लेकिन उन्होंने अपनी भाषा नहीं छोड़ी है, बांग्लास ाहित्यक ोब ढ़ायाह ै।ि नराशाक ेक ारणअ ापके अंदर धर्म के लिए भक्ति भाव के बाद भी धर्मांधता आ गई हैध र्मक ाब ाह्यरू पर हग याह ै।म द्रासम ेंअ ंत्यजोप र जितना अत्याचार होता है, अन्य जगहों पर वैसा नहीं होता। ब्राह्मण और अब्राह्मण में भेदभाव भी यहां अधिक है, फिर भी विभूति, चंदन और कुमकुम का उपयोग मद्रास में अधिक होता है। मंदिरों पर धन व्यय करना मद्रास ही जानता है, इससे यहां विद्वानों में नास्तिकता आ गई है, वे निराशावादी हो गए हैं दूसरी ओर आस्तिकों में केवल अंधकार फैला हुआ है। (खंड 21 पृष्ठ 241 से 243 नवजीवन 2 अक्टूबर 1921)

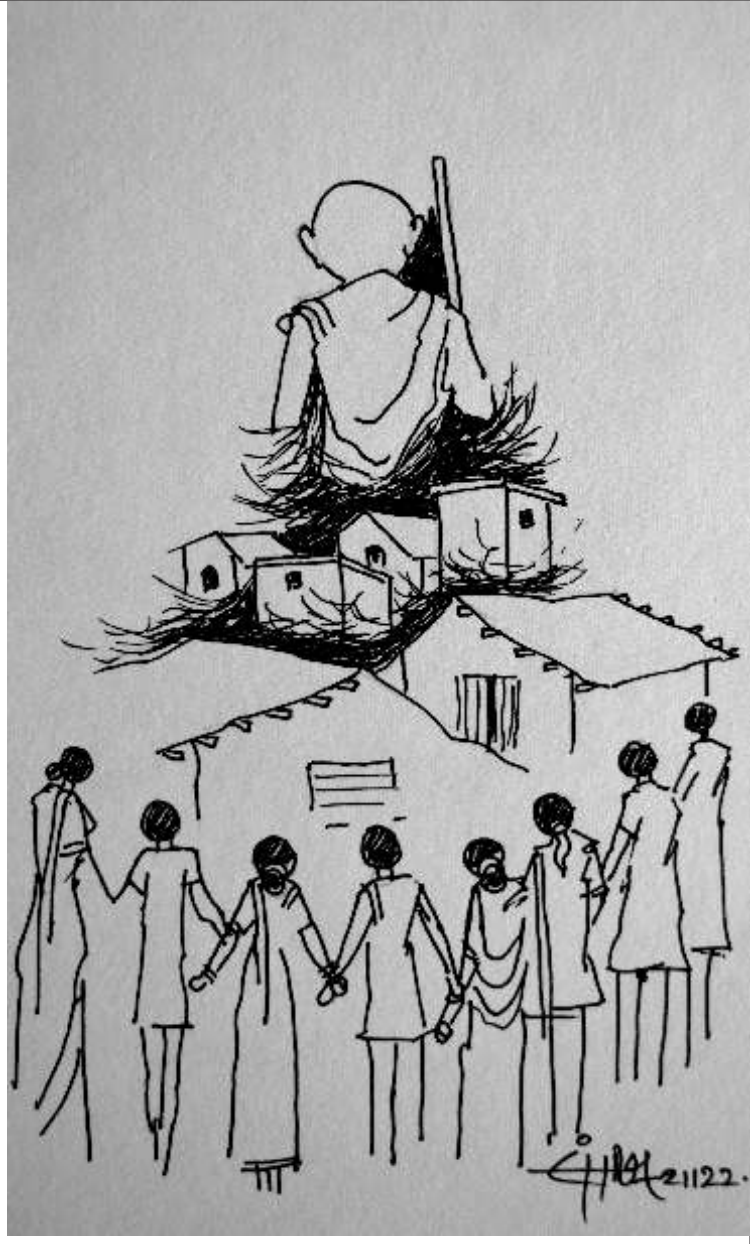

आजादीक ेब ादप हलेअ ौरए कमात्रज न्मदिनप र गांधी जीवन के अपने सभी पिछले जन्मदिवस से अधिक व्यथित दिखते हैं। हिंदू मुसलमान का दंगा चरम पर था,

उनकी मर्जी के खिलाफ भारत का विभाजन हो चुका था। कांग्रेस ने इन्हें अनावश्यक वस्तु की तरह किनारे कर दिया था, इन्होंने 2 अक्टूबर 1947 को कहा भी था कि लोग मुझे बधइयां क्यों दे रहे हैं? मिठाइयां क्यों बांट रहे हैं? 2 अक्टूबर 1947 को दिल्ली के प्रार्थना सभा में उन्होंने कहा कि आज मेरी जन्म तिथि है, मैं तो कोई अपनी जन्मतिथि इस तरह मानता नहीं हूं। मैं तो कहता हूं कि फाका करो, चरखाच लाओ,स च्चात रीकाय हीह ै।म ेरें लएत ोय ह मातम का दिन है, मैं आज तक जिंदा पड़ा हूं इस पर मुझको खुद आश्चर्य होता है, शर्म लगती है। मैं वही हूँ जिसकी जबान से एक चीज निकलती थी कि ऐसा करो, तो करोड़ों उसको मानते थे पर आज तो मेरी कोई सुनता ही नहीं है, हम तो बस अपनी ही करेंगे। उन्होंने कहा कि मेरे

फोटो और मूर्तियों को माला पहनने के लिए प्रत्येक व्यक्ति उत्सुक है परंतु मेरी सलाह वास्तव में कोई नहीं मानना चाहता। गांधी जी ने एक दिन कांग्रेस कार्य समिति के सदस्य से कहा अच्छी नाव ने हमें बंदरगाह तक पहुंचाया उसे हम अब छोड़ने नजर आ रहे हैं आज स्वाधीनता सचमुच आ गई है तब हम अहिंसा को तिलांजलि देते दिखाई दे रहे हैं। व्यथित भाव से उन्होंने कहा कि हम ऐसा समझते हैं कि कोई मुसलमान शरीफ हो ही नहीं सकता वह तो नालायक ही रहता है। ऐसी हालत में मेरे लिए हिंदुस्तान में जगह कहां है मैं जिंदा रहकर क्या करूंगा। आज मेरे से 125 वर्ष की बात छूट गई है 100 वर्ष की भी बात छूट गई है और 90 की भी मैं 79 वर्ष में तो पहुंच जाता हूं लेकिन वह भी मुझको चुभता है। (खण्ड 89 पृष्ठ 301)। गांधीजी ने सब लोगों से अनुरोध किया कि वे यह प्रार्थना करें कि ईश्वर या तो इस दवा नल को शांत कर दे या उन्हें उठा ले मैं कतई नहीं चाहता कि भारत में मेरा एक और जन्मदिन होने पाए महात्मा। (गांधी द लास्ट फेज खंड दो पृष्ठ 456 से 58) अपने जीवित अवस्था के अंतिम जन्मदिन पर उन्होंने सरदार से कहा था कि मैंने ऐसा कौन सा पाप किया था जो ईश्वर ने मुझे इस सारे संत्रास का साक्षी बनने के लिए जीवित छोड़ रखा है। (वही) उन्होंने जन्मदिन पर आकाशवाणी के विशेष कार्यक्रम को अपवाद स्वरूप ही सही सुनने का अनुरोध किया गया। इस पर उन्होंने कहा कि मुझे रेडियो के बजाय चरखा ज्यादा पसंद है, उसमें मुझे मानवता का निस्तब्ध विष दपूर्ण संगीत सुनाई देता है (वही)। मुंबई में एक सार्वजनिक जगह पर 10 लाख रुपए खर्च करके गांधी जी की मूर्ति खड़ी करने की बात चल रही थी। गांधी जी के पास कई आलोचना के पत्र आए, कुछ पत्र गुस्से से भरा था। गांधी जी ने इस पर प्रतिक्रिया दी और कहा कि कोई मेरी फोटो खींचना है यह मुझे अच्छा नहीं लगता कई बार कलाकारों को अपनी मूर्ति भी बनने दी है। इस असंगति के बावजूद अगर कोई मूर्ति खड़े करने की बात करता है तो यह उन्हें अच्छा नहीं लग सकता। इस समय जब लोगों को अनाज नहीं मिलता, पहनने को कपड़े नहीं, मुंबई में लोग भेड़ बकरियों का सा जीवन बिता रहे हैं। जन उपयोगी सेवा में इन पैसों को लगाना सबसे सुंदर मूर्ति होगी। अगर इतने रुपए अनाज पैदा करने में लगाया जाए तो कितने का पेट भर सकता है (खंड 89 पृष्ठ 200)।

अपने कहा कि अगर आप सचमुच मेरा जन्मदिन मानने वाले हैं तो आपका धर्म हो जाता है कि अब हम किसी को दीवाना बनने नहीं दें, अगर दिल में कोई गुस्सा हो तो उसको निकाल दें (खंड 89 पृष्ठ 301)। अक्टूबर 1947 को 2 तारीख, गांधी जी का जन्म दिवस उनके जीवन काल में अंतिम ही था। सुबह से ही अभिवादन के लिए लोग आ रहे थे। एक ने कहा बापूजी हम अपने जन्मदिन पर अन्य लोगों के चरण छूकर आशीर्वाद ग्रहण करतेह ैं,ल ेकिनअ ापकेम ामलेम ंब ातइ सकेा बलकुल विपरीत होती है, क्या यह उचित है? गांधी जी ने हंसकर कहा महात्मा के तरीके भिन्न होते हैं, आपने मुझे महात्मा बना दिया भले ही मैं नकली महात्मा हूं (महात्मा गांधी द लास्ट फेज खंड 2 पृष्ठ 456)। गांधी आशीर्वाद देना नहीं चाहते थे उनके अनुसार एक उत्तम कार्य में अपना आशीर्वाद स्वयं निहित रहता है ,दूसरी ओर बाहरी आशीर्वाद किसी के उद्यम की समुचित प्रगति में बाधक होता है क्योंकि बहुध काम करने वाले के दिल में झूठी आशा पैदा होती है और काम की सफलता के लिए जिस परिश्रम और सतर्कता की जरूरत होती है उससे वह विमुख हो जाता है (खंड 90 पृष्ठ एक हरिजन 23 नवंबर 1947)। आजादी के 75 वर्ष पूरे हुए, आज भी हमें गांधी याद आते हैं, गांधी को कौन याद कर रहा है? गांधी को कौन याद नहीं कर रहा? गांधी तो विचार रूप में आज भी हमारे सामने खड़ा है, इस अर्थ में गांधी ने कहा था की गांधी मर सकता है लेकिन गांधी विचार अमर रहेगा, वह कब्र से भी बोलता रहेगा। अहिंसा के विचारों में, शांति के विचारों में गांधी आज भी जीवित है। मेरी विनम्र राय है कि गांधी को ईश्वर नहीं बनाइए उनमें विश्व मानव के दर्शन समाहित हैं। वह ईश्वर का सच्चा संतान है। प्राफेसर गोरा का नास्तिकबाद और कबीर का पाहन पूजे हरि मिले के भी नजदीक।

(लेखक वरिष्ठ गांधीवादी विचारक हैं व महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के पूर्व अधिवक्ता रहे हैं।)

राम नाम, रामधुन एवं राष्ट्रसेवा

अमित त्यागी

गांधीजी का कुदरती इलाज राम धुन एवं राम नाम में छुपा हुआ है। कुदरती इलाज से तात्पर्य ऐसे उपचार या इलाज से है जो मनुष्य के लिये योग्य हो। मनुष्य का तात्पर्य प्राणी मात्र से है। मनुष्य में सिर्फ मनुष्य का शरीर शामिल नहीं है बल्कि मन और आत्मा भी है, इसलिए सच्चा कुदरती इलाज तो राम नाम ही है और राम धुन उसका माध्यम। रघुपति राघव राजा राम एक चिकित्सा पद्धति है। रामबाण ऐसे ही निकला है। रामनाम ही इलाज़ का रामबाण है। कुदरत ने मनुष्य को योग्य माना है। शरीर मे कोई भी व्याधि हो, अगर मनुष्य हृदय से राम नाम ले तो उसकी व्याधि नष्ट होनी चाहिए। रामनाम का अर्थ ईश्वर, खुदा या गॉड कुछ भी हो सकता है। हर धर्म मे ईश्वर के नाम अलग है, व्याधि की स्थिति मे जो जिस नाम से चाहे राम को चुन लें। यहाँ ज़्यादा महत्वपूर्ण है अपने राम के प्रति हार्दिक श्रद्धा का भाव होना एवं श्रद्धा के साथ प्रयत्न प्रचुरता के साथ शामिल हो।

कुदरती इलाज के इस सवाल का जवाब महात्मा गांधी के हरिजन सेवक मे 03 मार्च 1946 को प्रकाशित लेख के अध्ययन से मिलता है। इसके अनुसार गांधीजी कहते हैं कि जिस चीज का मनुष्य पुतला बना है उसी से वह इलाज ढूँढे। शरीर रूपी पुतला पृथ्वी, जल, आकाश, अग्नि एवं वायु से बना है। इन पाँच तत्वों से जो मिल सके, वह ले लें। इन सबके साथ राम नाम तो अनिवार्य रूप से चलता ही रहे। गांधीजी के अनुसार इसका नतीजा यह आता है कि इतना होते हुये भी शरीर का नाश हो तो होने दें और हर्षपूर्वक शरीर छोड़ दें। दुनिया मे ऐसा कोई इलाज नहीं निकला है जिससे शरीर अमर बन सके। अमर तो आत्मा ही है। उसे कोई मार नहीं सकता। आत्मा की शुद्धि के लिये रामधुन एक अनिवार्य मंत्र है। इसके साथ ही शुद्ध शरीर प्राप्त करने का प्रयास तो सब करते ही रहें। इसी प्रयत्न के दौरान कुदरती उपचार स्वत: मर्यादित हो जाता है और इससे आदमी बड़े बड़े अस्पतालों और योग्य डोक्टरों वगैरह की व्यवस्था करने से बच जाता है। दुनिया के असंख्यक लोग दूसरा कुछ कर भी नहीं सकते और जिसे असंख्यक नहीं कर सकते, उसे थोड़े लोग क्यों करें? समस्या यहाँ पर है।

दूसरी सब चीजों की तरह मेरी कुदरती इलाज की कल्पना ने भी धीरे धीरे विकास किया है। बरसों से मेरा यह विश्वास रहा है कि जो मनुष्य अपने मे ईश्वर का अस्तित्व अनुभव करता है और इस तरह विकार रहित स्थिति प्राप्त कर चुकता है। वह लंबे समय जीवन के रास्ते मे आने वाली

आत्मा की शुद्धि के लिये रामधुन एक अनिवार्य मंत्र है। इसके साथ ही शुद्ध शरीर प्राप्त करने का प्रयास तो सब करते ही रहें। इसी प्रयत्न के दौरान कुदरती उपचार स्वत: मर्यादित हो जाता है और इससे आदमी बड़े बड़े अस्पतालों और योग्य डोक्टरों वगैरह की व्यवस्था करने से बच जाता है।

सारी कठिनाइयों को जीत सकता है। मैंने जो देखा और धर्म शास्त्रों मे पढ़ा है, उसके आधार पर इस नतीजे पर पहुंचा हूँ कि जब मनुष्य में उस अदृश्य शक्ति प्रति पूर्ण जीवित श्रद्धा पैदा हो जाती है तब उसके शरीर में भीतरी परिवर्तन होता है। लेकिन वह सिर्फ इच्छा करने मात्र से नहीं हो जाता। इसके लिए हमेशा सावधान रहने और अभ्यास करने की जरूरत रहती है। दोनों के होते हुये भी ईश्वर कृपा न हो तो मानव प्रयत्न व्यर्थ जाता है 'प्रेस रिपोर्ट, 12 जून 1945'

कुदरती इलाज़ की प्रक्रिया मे रामनाम को गांधीजी रोग मिटाने वाला मानते हैं। इस बारें मे वह लिखते हैं कि वैद्यराज श्री गणेश शास्त्री मुझसे कहते हैं कि इसके संबंध का और इससे मिलता जुलता साहित्य आयुर्वेद मे काफी पाया जाता है। रोग को मिटाने मे कुदरती इलाज का अपना बड़ा स्थान है और उसमे भी राम नाम विशेष है। हमे यह मानना चाहिए कि जिन दिनों चरक, वाग्भट्ट वगैरह ने लिखा है उन दिनो ईश्वर को राम नाम को पहचानने की रूढ़ि नहीं पड़ी थी। उस समय विष्णु के नाम की महिमा थी। आगे गांधीजी बताते हैं कि मैंने तो बचपन से ही रामनाम के जरिये ईश्वर को भजा है। राम धुन को माध्यम बनाया है। लेकिन मैं ये भी जानता हूँ कि ईश्वर को - नाम से भजो या संस्कृत से या देश में उपलब्ध किसी भी अन्य भाषा से परिणाम एक ही होता है। ईश्वर को नाम की जरूरत नहीं है। वह और उसका कायदा एक ही है। ईश्वर को नाम की जरूरत नहीं है। ईश्वर नाम दवाओं की एक दवा है। हम न ईश्वर को पहचानते हैं और न ही निरंतरता के साथ राम नाम जपते हैं। यदि जपते हैं तो जबान से जपते हैं दिल से नहीं। ऐसा करने मे हम तोते की ज़बान की नकल तो करते हैं उसके स्वभाव का अनुसरण नहीं। शायद यही कारण है कि हम राम धुन के माध्यम से निरोगी होने का मंत्र नहीं जान पाते। ऐसे लोग ईश्वर को सर्वरोगहारी के रूप मे नहीं पहचानते? और पहचाने भी तो कैसे? यह दवा न तो वैद्य देते हैं न ही हकीम और न डॉक्टर। खुद वैद्यो, हकीमों, और डॉक्टरों को भी इस पर आस्था नहीं। यदि वे बीमारी को घर बैठे गंगा सी यह दवा दे दें तो उनका धंधा कैसे चले। शायद इसलिए लोगों की नज़र मे पुड़िया और शीशी ही राम बाण दवा है। जबकि वास्तविकता यह है कि सच्चे मन से राम धुन के माध्यम से राम का नाम जपा जाये तो ये ज़्यादा कारगर है। पर दवा देने से रोगी को मानसिक संतुष्टि मिलती है और हाथों-हाथ फल भी देखने को मिलता है। जैसे फलां-फलां ने मुझे चूरन दिया और मैं अच्छा हो गया। इस तरह से व्यापार चल निकलता है। हरिजन सेवक के 24 मार्च 1946 के अंक मे गांधीजी लिखते हैं-

'वैद्यों और डॉक्टरों के राम नाम रटने की सलाह देने से रोगी का दुख दूर नहीं होता। जब वैद्य स्वयं उसके चमत्कार को जानता हो, तभी रोगी को भी उसके चमत्कार का पता चलता है। राम नाम पोथी का बैंगन नहीं, वह तो अनुभव की प्रसादी है। जिसने उसका अनुभव प्राप्त किया है, वही वह दवा दे सकते है, अन्य नहीं। वैद्यराज ने मुझे चार मंत्र लिखकर दिये हैं। उनमें चरक ऋषि का मंत्र सीधा और सरल है। उसका अर्थ यूं है : चराचर के स्वामी विष्णु के हज़ार नामों से एक का भी जप करने से सब रोग शांत होते हैं।

विष्णुम सहस्त्रमूर्धनाम चराचरपति विभूम ।
स्तुवन्नामसहस्त्रेन ज्वरान सर्वान व्यपोहति॥

चरक चिकित्सा, अ0 3- श्लोक 311'

प्राकृतिक उपचार के इलाज में सबसे समर्थ इलाज राम नाम है। इसमे अचंभे की कोई बात ही नहीं है। एक प्रकरण का ज़िक्र करते हुये गांधीजी कहते हैं कि एक मशहूर वैद्य ने अभी मुझसे कहा कि मैंने अपनी सारी ज़िंदगी मेरे पास आने वाले बीमारों को तरह तरह की दवा की पुड़िया देने मे बितायी हैं। लेकिन जब आपने शरीर के रोगों को मिटाने के लिये राम नाम की दवा बतायी है, तब मुझेय ादप ड़ा ि कच रकअ ैरव ाग्भट्टज ैसेह मारेप ुराने धन्वंतरियों के वचनों से भी आपकी बात की पुष्टि मिलती है। आध्यात्मिक रोगों 'आधियों' को मिटाने के लिये राम नामक ेज पक इ लाजब हुतप ुरानेज मानेस ेय हाँह ोता आया है, लेकिन चूंकि, बड़ी चीज़ मे छोटी चीज़ भी समा जाती है, इसलिए मेरा ये दावा है कि हमारे शरीर की बीमारियों को दूर करने के लिये भी राम नाम का जप सब इलाज़ों का इलाज़ है।

कोई भी प्राकृतिक उपचार अपने बीमार को यह नहीं कहेगा कि तुम मुझे बुलाओ तो मैं तुम्हारी सारी बीमारी दूर कर दूंगा। उपचार बीमार को सिर्फ ये बता सकता है कि प्राणीम ात्रम ेर हनेव ालाअ ैरस बब ीमारियोंक ो ि मटाने वाला तत्व कौन सा है? और किस तरह उस तत्व को जागृत कियाज ास कताह ै।अ गरअ ाज ि हंदुस्तानइ सत त्वक ी

ताक़त को समझ जाये तो हम आज़ाद तो हो ही जाये लेकिन उसके अतिरिक्त आज हमारा जो देश बीमारियों और कमजोर तबीयत वालों का घर बन बैठा है, वह तंदुरुस्त और ताकतवर शरीर वाले लोगों का देश बन जाये। राम नाम की शक्ति की अपनी कुछ मर्यादा है, और उसके कारगर होने के लिये कुछ शर्तों का पूरा होना जरूरी है। रामनाम कोई जंतर मंतर या जादू टोना नहीं है। जो लोग खा-खा कर खूब मोटे हो गए हैं और जो अपने मुटापे की और उसके साथ बढ्ने वाली बादी की आफत से बच जाने के बाद फिर तरह-तरह के पकवानों का मज़ा चखने के लिये इलाज़ की तलाश मे रहते हैं, उनके लिये राम नाम किसी काम का नहीं है। रामनाम का उपयोग अच्छे काम केंा लयेह ोताह ै।ब ुरेक ामोंक ें लयेह ोतात ेच ोरअ ौर डाकू सबसे बड़े राम भक्त बन जाते और हर समय राम धुन गाते रहते। राम नाम उनके लिये है जो दिल से साफ हैं और दिल की सफाई करके हमेशा पाक साफ रहना चाहते हैं। भोग विलास की शक्ति या सुविधा पाने के लिये राम नाम कभी साधन नहीं बन सकता है।

'बादी का इलाज़ रामनाम नहीं उपवास है। उपवास का काम पूरा होने पर प्रार्थना का काम शुरू होता है। सच यह है कि प्रार्थना से उपवास का काम आसान और हल्का हो जाता है। जो डाक्टर बीमार की बुराइयों को बनाए रखने या उन्हे सहेजने में अपनी होशियारी का उपयोग करता है वह खुद गिरता है और अपने बीमार को भी नीचे गिराता है। अपने शरीर को अपने सृजनहार की पूजा के लिये मिला हुआ एक साधन समझने के बदले उसी की पूजा करने और उसको किसी भी तरह बनाए रखने के लिये पानी की तरह पैसा बहाने से बढ़कर बुरी गत और क्या हो सकती है? राम नाम रोग को मिटाने के साथ ही साथ आदमी को भी शुद्ध बनाता है। यही राम नाम का उपयोग है और यही उसकी मर्यादा है'। 'हरिजन सेवक, 7 अप्रैल 1946'

इसीक्र मम ेंअ ार्गें हन्दीन वजीवनक े6 अ क्तूबर 1927 को प्रकाशित अपने लेख मे महात्मा गांधी कहते हैं कि हमें शरीर के बदले आत्मा के चिकित्सकों की जरूरत है। अस्पतालों और डाक्टरों की वृद्धि कोई सच्ची सभ्यता की निशानी नहीं है। हम अपने शरीर से जितनी कम मोहब्बत करें, उतना ही हमारे और सारी दुनिया के लिये अच्छा है। इस विचार के बीस साल बाद 15 जून 1947 को हरिजन सेवक के अंक मे गांधीजी कहते हैं कि आपको यह जानकार खुशी होगी कि चालीस साल पहले जब मैंने कुने की 'न्यू साइंस आर्फ हीलिंग' और जस्ट की 'रिटर्न टू नेचर' नाम की किताबें पढ़ी, तभी से कुदरती इलाज़ का पक्का हिमायती हो गया था लेकिन मुझे यह कबूल करना चाहिए कि तब मैं 'रिटर्न टू नेचर' का पूरा अर्थ नहीं समझ सका हूँ। अब मैं कुदरती इलाज़ का ऐसा तरीका खोजने की कोशिश कर रहा हूँ जो हिंदुस्तान के करोड़ों गरीबों को फायदाप हुचास कें।इ सइ लाज़स ेम नुष्यम ेंक ुदरतनय े बात समझ आ जाती है कि दिल से भगवान का नाम लेना ही सारी बीमारियों का सबसे बड़ा इलाज़ है। इस भगवान को हिंदुस्तान मे कुछ करोड़ लोग राम के नाम से जानते हैं और दूसरे कुछ करोड़ अल्लाह के नाम से पहचानते हैं। 'रघुपति राघव राजाराम' राम धुन एक ऐसा माध्यम है जो निरोगी काया का रामबाण अचूक इलाज़ है।

बॉक्स : देहाती दवाएं, जड़ी-बूटी दूसरे देशों मे नहीं मिलेंगी। वे तो आयुर्वेद मे ही हैं। अगर आयुर्वेद वाले धूर्त हों, तो पश्चिम जाकर आने से वे कुछ भले नहीं बन जायेंगे। शरीर शास्त्र पश्चिम से आया है। सब कोई कबूल करेंगे कि उसमे सीखने लायक बहुत कुछ है। पर ऐसा भी नहीं है वह सिर्फ पश्चिम मे ही है। कुने, जुस्ट, फादर आदि ने जो लिखा है वो सबके लिये है। सब जगहों के लिये है। उसे जानना हमारा धर्म है।

राम नाम और रामधुन एवं राष्ट्रसेवा

गांधीजी कहते हैं कि अगर हम अपने दिल से डर का तत्व दूर कर दें तो हम स्वयं की मदद कर सकते हैं। ऐसी कौन सी जादुई वस्तु है जो हमारे अंदर के डर को दूर कर सकती है। गांधीजी के प्रयोगों के आधार पर देखा जाये तो वह है रामनाम का अमोघ मंत्र। राम नाम के बगैर इंसान एक सांस नहीं ले सकता है। गांधी के राम अनादि हैं। अनंत हैं। निरंजन हैं। निराकार है। हम चाहें उसे ईश्वर कहें, अल्लाह कहें या गॉड। हमें उस पर विश्वास करना होगा। राम धुन के माध्यम से या अन्य किसी भी पवित्र माध्यम से उसे स्वयं के भीतर आत्मसात करना होगा। एक प्रकरण मे गांधीजी रुँधे गले से बताते हैं कि बचपन मे वे बहुत डरपोक थे और उन्हे परछाई से भी डर लगता था। उन दिनों उनकी दाई रंभा ने उन्हे राम नाम का मंत्र सिखाया था। उस दिन से राम नाम उनके लिये एक अचूक मंत्र बन गया है। आगे गांधीजी कहते हैं कि रामनाम पवित्र लोगों के दिल मे

हमेशा रहता है। जिस तरह बंगाल मे श्री चैतन्य और श्री रामकृष्ण का नाम मशहूर है, उसी तरह काश्मीर से कन्या कुमारी तक हर एक हिन्दू घर जिनके नाम से वाकिफ है उन भक्त शिरोमणि तुलसीदास ने अपने महाकाव्य मे हमको राम नाम का मंत्र दिया है। अगर आप राम नाम से डर कर चले तो तो दुनिया में आपको क्या राजा, क्या रंक, किसी से डरने की जरूरत नहीं है। 'अल्लाहो अकबर' की पुकारों से आपको क्यों डरना चाहिए? इस्लाम का अल्लाह तो बेगुनाहों की हिफ़ाजत करने वाला है। पूर्वी बंगाल मे हुई वारदातों को पैगंबर साहब का इस्लाम कबूल नहीं करता।

'अगर ईश्वर में आपकी श्रद्धा है तो किसकी ताकत है कि आपकी औरतों और लड़कियों की इज्ज़त पर हाथ डाले? इ सलिएम ुझेउ म्मीदह ै कि आप लोग मुसलमानों से डरना छोड़ देंगे। अगर आप रामनाम में विश्वास करते हैं तो आपको पूर्वी बंगाल छोड़ने की बात नहीं करनी चाहिए। खतरे का सामना करने के बदले उससे दूर भागना, इंकार करना। उस श्रद्धा से इंकार करना है, जो मनुष्य की मनुष्य पर, ईश्वर पर और अपने आप पर रहती है। अपनी श्रद्धा का ऐसा दिवाला निकालने से बेहतर तो यह है कि इंसान डूब कर मर जाये।' 'हरिजन सेवक, 24 नवम्बर 1946'

एक अन्य पत्र मे गांधीजी कहते हैं कि जो कुछ करना है, उसके लिये पश्चिम की तरफ नज़र दौड़ाये और वहाँ से हर बात सीखें तो मुझे नहीं लगता कि वह भारत के काम का होगा। वहम से बाहर आते हुये वह रामनाम हम सबके बीच भीतर ही मौजूद है। अगर राम नाम लेना सीखने के लिये विलायत जाना जरूरी हो तब तो हम कहीं के भी न रहें। एक सहज बात समझ में आना बेहद आवश्यक है कि पृथ्वी, पानी, आकाश, तेज़, और वायु के ज्ञान के लिये समुन्द्र पार जाने की जरूरत हो ही नहीं सकती। हमें जो सीखना है वह यहीं है, हमारे गाँवों मे है।

कोई भी विचारधारा इस कसौटी पर अवश्य कसी जाती है कि उसके अपनाने पर क्या एक सक्षम राष्ट्र की अवधारणा की पुष्टि होती है। लेख का यह भाग गांधीजी के द्वारा लिखे लेखों के विश्लेषण का अंतिम पड़ाव है किन्तुय हस बसेज् यादाम हत्वपूर्णए वंस ामयिकह ै।इ स संदर्भ मे गांधीजी कहते हैं कि जिन्हे थोड़ा भी अनुभव है

वह दिल से गायी जाने वाली रामधुन की, यानि भगवान का नाम जपने की शक्ति को जानते हैं। मैं लाखों सिपाहियों के अपने बैंड की लय के साथ कदम उठाकर मार्च करने से पैदा होने वाली ताक़त को जानता हूँ। फौजी ताकत ने दुनिया मे जो बरबादी की है उसे रास्ता चलने वाला भी देख सकता है। हालांकि, यह कहा जाता है कि लड़ाई खत्म हो गयी है फिर भी उसके बाद के नतीजे लड़ाई से भी ज़्यादा बुरे साबित हुये हैं। यही फौजी ताकत के दिवालियेपन का सबूत है।

'मैं बिना किसी हिचकिचाहट के यह कह सकता हूँ कि लाखों आदमियों द्वारा सच्चे दिल से एक ताल और एक लय के साथ गायी जाने वाली रामधुन की ताक़त फौजी ताक़त के दिखावे से बिलकुल अलग और कई गुना बढ़ी-चढ़ी होती है। दिल से भगवान का नाम लेने से आज की बरबादी की जगह टिकाऊ शांति और आनंद पैदा होगा।''हरिजन सेवक, 31 अगस्त 1947'

यानि की एक बात तो साफ है कि यदि किसी देश के करोड़ों लोग एक ही ध्वनि के साथ एक ही मंत्र का जाप करेंगे तो उसकी गूंज पूरे विश्व में सुनी जाएगी। रघुपति राघव राजाराम, पतित पावन सीताराम का जाप अगर नियमित तौर पर निरंतरता के साथ किया जायेगा तो यह संगठित राष्ट्रवाद को मजबूती प्रदान करेगा। इसके साथ ही गांधीजी के राष्ट्रवाद में कर्म को भी महत्व दिया गया है। इस संबंध मे एक बार उनसे प्रश्न किया गया था कि क्या किसी पुरुष या स्त्री को राष्ट्रीय सेवा में भाग लिए बिना राम नाम के उच्चारण मात्र से आत्म दर्शन प्राप्त हो सकता है ? प्रश्न पूछने वाले ने आगे फिर प्रश्न किया कि मेरी कुछ बहनें कहा करती हैं कि हमको गृहस्थी के काम काज करने तथा यदा-कदा दीन दुखियों के प्रति दयाभाव दिखाने के अतिरिक्त और किसी काम की जरूरत नहीं है? गांधीजी के द्वारा इस प्रश्न का उत्तर ऐसे दिया गया।

'इस प्रश्न ने केवल स्त्रियों को ही बल्कि बहुत से पुरुषों को भी उलझन मे डाल रखा है, और मुझे भी इसने धर्म संकट मे डाला है। मुझे यह बात मालूम है कि कुछ लोग इस सिद्धान्त के मानने वाले हैं कि काम करने की कतईज रूरतन हींह ैअ ैरप रिश्रमम ात्र० यर्थह ैम ैइ स ख्याल को बहुत अच्छा तो नहीं कह सकता हूँ। अलबत्ता, अगर मुझे उसे स्वीकार करना ही हो, तो मैं उसके अपने ही अर्थ लगाकर उसे स्वीकार कर सकता हूँ। मेरी नम्र सम्मति यह है कि मनुष्य के विकास के लिए परिश्रम करना अनिवार्य है। फल का विचार किये बिना परिश्रम करना आवश्यक है। रामनाम या ऐसा ही कोई पवित्र नाम जरूरी है-महज लेने के लिए ही नहीं, बल्कि आत्मशुद्धि के लिए, प्रयत्नों को सहारा पहुचाने के लिये और ईश्वर से सीधे सीधे रहनुमाई पाने के लिये। इसलिए राम नाम का उच्चारण कभी परिश्रम के बदले काम नहीं दे सकता है। वह तो परिश्रम को अध्कि बलवान बनाने और उसे उचित मार्ग पर ले चलने के लिये है। यदि परिश्रम मात्र व्यर्थ है तो फिर घर गृहस्थी की चिंता क्यों ? और दीन दुखियों की यदा कदा सहायता किस लिये। इसी प्रयत्न मे राष्ट्रसेवा का अंकुर भी मौजूद है। मेरे लिये तो राष्ट्रसेवा का अर्थ मानव जाति की सेवा है। यहाँ तक कि कुटुंब की निर्लप्त भाव से की गयी सेवा भी मानव जाति की सेवा है। इस प्रकार की कौटुंबिक सेवा अवश्य ही राष्ट्रसेवा की और ले जाती है। रामनाम से मनुष्य में अनासक्ति और समता आती है, रामनाम कभी उसे आपत्तिकाल मे ध्र्मच्युत नहीं होने देता। गरीब से गरीब लोगों की सेवा किये बिना या उनके हित मे अपना हित माने बिना मोक्ष पाना मैं असंभव मानता हूँ।' 'हिन्दी नवजीवन, 21 अक्तूबर 1926'

इस तरह से रामनाम और रामधुन का सार निकलता है कि 'गांधी के राम' सिर्फ भगवान की भक्ति की आड़ मे कर्म को पीछे छोड़ने वालों के समर्थक नहीं है। प्राणी मात्र के लिये सेवाकार्य एवं कर्मयोग एक आवश्यक शर्त है। गांधीजीक हतेह ैि कक ठिनस ेवाकार्यह ोय ाउ ससेध् ाी कठिन अवसर हों, तो भी भगवद्भक्ति यानि रामनाम बंद हो ही नहीं सकता है। हालांकि, उसका वाक्य रूप प्रसंग के मुताबिक बदलता रहेगा। माला छूटने से रामनाम, जो हृदय मे अंकित हो चुका है, थोड़े ही छूट सकता है।

('प्रबंधन और विधि मे परास्नातक लेखक के विधिक एवं संवैधानिक विषयों पर आलेख प्रमुख राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर प्रकाशित हो रहे हैं। अन्तराष्ट्रीय मानवाधिकार के भारतीय संदर्भ' नामक शोधपत्र मे आपने गरीबी, अशिक्षा, चिकित्सा आदि को प्रमुखता से संदर्भित किया है।)

संपर्कः

ई-मेल : amittyagi219@rediffmail-com

नरेश अग्रवाल की कविताएं

महात्मा गांधी मार्ग

मैंने हर शहर में
महात्मा गांधी मार्ग देखा
चित्र देखे, उन पर माल्यार्पण देखा
नहीं देखा किसी को चरखा चलाते
सूत कातते
नहीं देखा वैसी ऐनक लगाकर
छूत-अछूत को एक भाव से देखते

सभी जगह महात्मा थे
कोर्ट परिसर से संसद तक
बच्चे-बच्चे तक जानते थे
उनके अधनंगे शरीर
और सहारा देती लाठी को

नहीं जाना किसी ने
कैसे जीता था यह शरीर
कितना काम लिया गया था इससे
चलने का पांवों से
लिखने का हाथों से
बोलने का मुख से
सोचने का दिमाग से

साबरमती आश्रम में रखी हुई
सौ किताबों वाली
इस रचनावली को
चित्रों के साथ
सजे हुए देखकर
भारत का हर पथ
महात्मा का बनाया नजर आता है

कितना अच्छा साफ सुथरा
मार्गदर्शन देने वाला

असंख्य जिसके पीछे चल रहे
निरंतर लाभान्वित होते हुए

अनेक बुरे भी शामिल
अपने पद-चिह्न बनाने के लिए
महात्मा के पथ को
मिटाने की कोशिश करते

हर कोशिश के बावजूद महात्मा का पथ जिंदा है
भले बदल कर नाम अंग्रेजी में
एम. जी. रोड हुआ!

गुलाबी नोट

मेरे छह: वर्षीय पोते ने
गुलाबी नोट वापस करते हुए कहा
दादाजी यह नोट नहीं चलेगा
हमारी स्कूटर इसके सहारे नहीं बढ़ सकती
इनकार किया है पेट्रोल पंप वाले ने

मैं आश्चर्य से इसे देखता रहा
अभी इसकी उम्र खत्म नहीं हुई
जीना है अभी और चंद महीने
कोई कैसे इंकार कर सकता है

फिर हाथों में लेकर इसे जांचता हूं
जो बिल्कुल नया और दुरुस्त
कुछ दिन पहले ही बैंक से लाया हूं
इस पर बापू की चमकती तस्वीर
जिसे गुजरने भी नहीं दिया
किन्हीं बुरे हाथों से
यह बिल्कुल साफ सुथरा
मेरी मेहनत की कमाई

मुझे दुख हुआ
हर यात्रा में सबसे कम जगह घेरने वाला
हर मुसीबत का साथी
कल तक मुझे साबरमती के दर्शन कराने वाला
अब कुछ मील की यात्रा भी नहीं करा सकेगा
दुख हुआ सोचकर
लोगों ने बापू का जमकर दोहन किया
परिणाम मैं भुगत रहा
मेरे पोते ने मुझ पर भी शंका की
नई भाव भंगिमा से देखा
कहीं मैं भी इसी तरह
निरस्त न कर दिया जाऊं घर से
और इस गुलाबी नोट की तरह
भींच लिया मेरे हाथों को

संपर्क:
मो. 9334825981

मोनिका राज की कविताएं

तुम्हारी निष्ठुरता

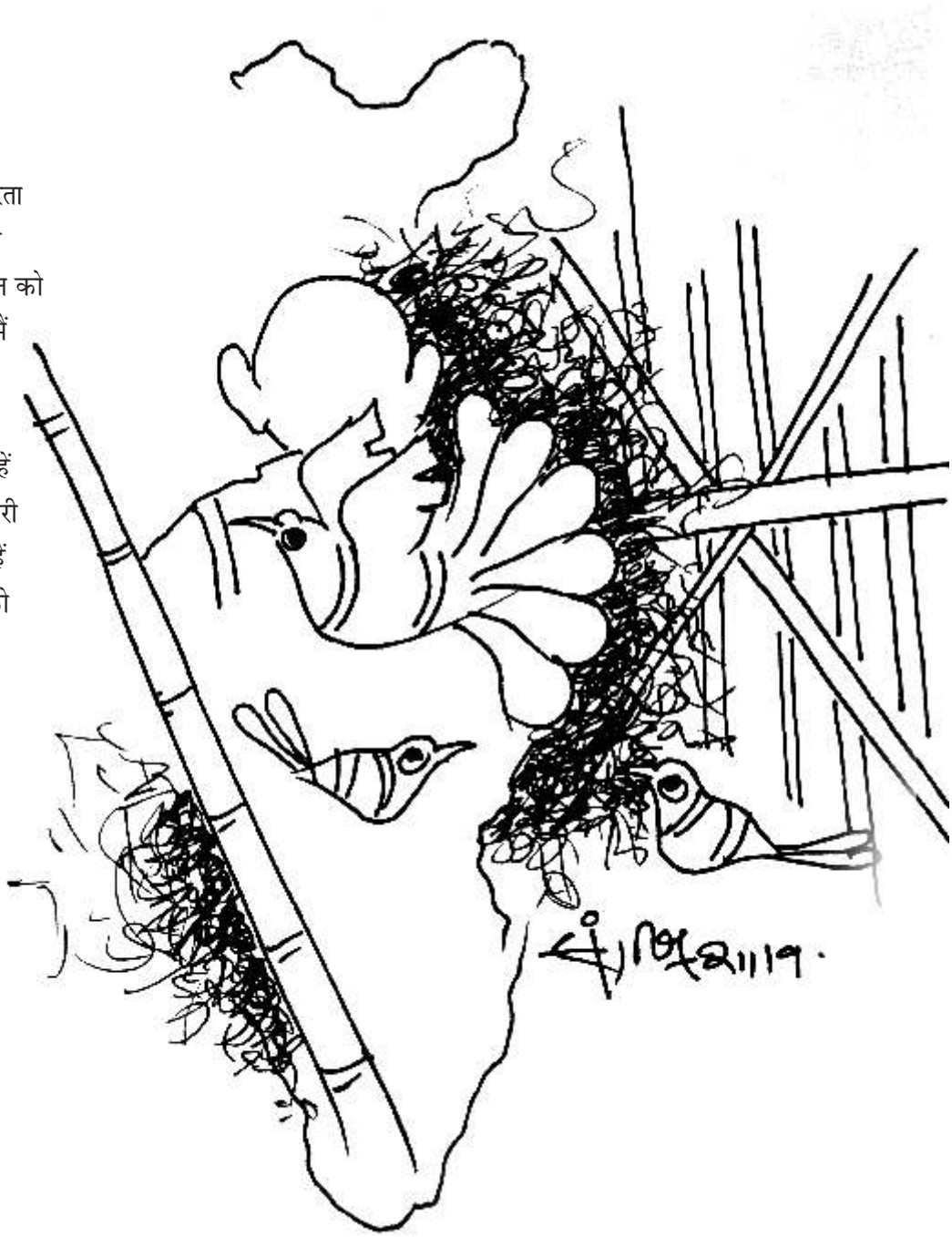

कभी-कभी तुम्हारी निष्ठुरता
तोड़ देती है मुझे अंदर तक
झकझोर देती है मेरे अंतर्मन को
पर फिर भी मुस्कुराती हूं मैं
यह सोच कर।।।

कभी तो एहसास होगा तुम्हें
कभी तो एहमियत होगी मेरी
कभी तो कमी खलेगी तुम्हें
कभी तो याद करोगे मुझको
पर।।।

ऐसा करने में
ज़्यादा विलम्ब न करना
कहीं इंतजार करते-करते
मैं थक न जाऊं
कहीं राह तकते-तकते
मैं विलीन न हो जाऊं
कहीं यूँ हीं चलते-चलते
मैं खो न जाऊं।

खूंटे से बँधी गाय

गाएं पैदा नहीं होती, बनायीं जाती हैं
कुदरत ने पक्षपात नहीं किया
उनके निर्माण में
उनकी नजर में तो
गाय और बैल दोनों एक समान हैं
दोनों को वक्त के साथ-साथ
शक्ति प्रदान की आत्मनिर्भर बनने की
पर, धरती पर निजी स्वार्थ के लिए
मनुष्यों ने गाय को ''गाय'' बनाकर
छीन लिया उनसे
आत्मनिर्भर होने का अधिकार
उनके उगते सीगों को दाग दिया
ताकि कल को मनमानी करने पर
वो सींग मारकर प्रतिकार न कर सके
ताकि भविष्य में आत्मरक्षा के लिए
वो कभी सर न उठा सकें
डाल दी गई उनके नाक में नकेल
और गले में एक रस्सी का फंदा
ताकि उन्हें कोई और निर्देशित कर सके
बाँध दिया गया उन्हें एक खूंटे से
ताकि वो स्वच्छन्द विचर न सके
बाँध दिए गए उनके पिछले दोनों पैर
ताकि उन्हें दुहा जा सके आसानी से
सुनो लड़कियों,
कभी जब उपमा दी जाए तुम्हें
गाय-सी सीधी का तो,
तुम खुश मत होना
मुस्कुरा कर शर्माना मत
क्यूंकि इस उपमा के पीछे साजिश है
तुम्हें आत्मनिर्भर न बनने देने की
तुम्हें बेबस, लाचार कर देने की
उड़ान भरने से पहले ही
तुम्हारे पर काट दिए जाने की
ताकि कल को कुछ गलत होने पर
कोई प्रतिकार न कर सको तुम
इसलिए सबल बनो, प्रतिवाद करो
बतलाओ दुनिया को कि
तुम निर्बल नहीं, सबल हो
तुम्हें स्वीकार नहीं बन जाना
एक खूंटे से बंधी गाय
तुम्हारा भी स्वतंत्र अस्तित्व है
तुम अपनी आत्मरक्षा करने में सक्षम हो
तुम अपना कल लिखने के काबिल हो
और तुम अपना यह हक
किसी को भी छीनने न दोगी।

मुझको बसंत नहीं भाती

तरु भी लद गए नव पल्लव से
मधुकर से गुंजीत हुए उपवन
सरसों फूले, वसुधा नित नई हुई
कोकिल ने भी छेड़ा तान मधुर।

बागों में अमिया है अब बौराई
सुवासित हुआ है देखो पवन
भौरों के गुंजन, पंछी के कलरव से
पुलकित होने लगा हर अंग-अंग।

पर इन सब को देख कर भी
जाने क्यों विरक्त हो रहा मेरा मन
दिल में उद्दीग्न है विरह की अग्नि
कैसे तुमको मैं भुल पाऊं, कांत?

क्यों फांस चुभ रही दिल में मेरे
जाने क्यों न अतीत मौन रहा
हर हरकत कुदरत की मुझको
अब हर पल तेरी याद दिला रहा।

तेरे विरह में डूबा हूं इस कदर
कि अब नैन हुए मेरे सावन
चुभती है तुमसे बिछोह कुछ यूँ
अब मुझको बसंत नहीं भाती।

सम्पर्क :
महामाया गर्ल्स हॉस्टल,
नव नालंदा महाविहार, नालंदा, बिहार।
पिनकोड - 803111।
मो. - 7061624956।

फोटो में गांधी

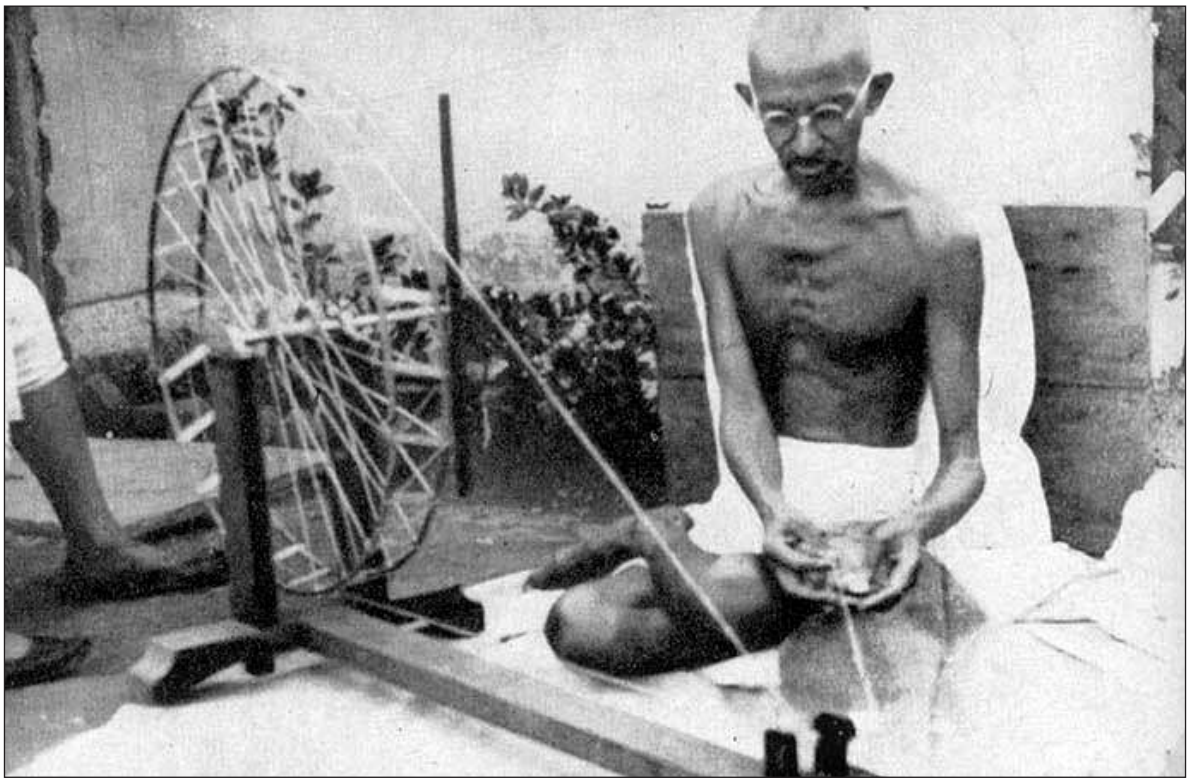

शारन्या पाठक,
कक्षा-आठवीं 'अ'
होली इन्नोसेटंस पब्लिक स्कूल,
विकास पुरी, नई दिल्ली

बाल विज्ञान कथा
चंद्रयान-3

रंगनाथ द्विवेदी

आज सरस्वती कॉन्वेन्ट स्कूल में अन्य दिनों की अपेक्षा कुछ ज्यादा ही बच्चे आए हुए थे, क्योंकि कल छुट्टी के समय ही सारे बच्चों को प्रार्थना की जगह बुलाकर प्रिंसिपल मैम ने बता दिया था कि, ''कल मीटिंग हॉल में हमारे साइंस की टीचर जीनत मैम चंद्रयान-3 की चंद्रमा पर सफलतापूर्वक लैंडिंग की ढेर सारी जानकारी आप सभी लोगो को देंगी। ऐसे में कल आप सभी लोग समय से स्कूल पहुंच जाएं''।

इन्ही बच्चो में आलोक, प्रमोद, राजेश, नीरज, स्वाति और प्रिया जो कि कक्षा छः के स्टूडेंट थे। इनकी गिनती क्लास के सबसे होनहार और तेज छात्रों में थी। आज वे सभी अन्य दिनों की अपेक्षा समय से स्कूल आ गए थे। अतः अभी मीटिंग हॉल खुलने और अन्य बच्चो के आने में थोड़ा समय था तो ऐसे में वे सभी एक जगह बैठकर आपस में बाते करने लगे तभी आलोक तपाक से बोला, - यार! चाहे जो भी हो पर अपनी जीनत मैम का साइंस की जानकारी के मामले में कोई जवाब नही। सच ! अगर वह हमारे स्कूल में साइंस की टीचर नही होती तो इतना श्योर है कि वह भी इसरो की साइंटिस्ट होती।

उन सभी ने आलोक की हाँ में हाँ मिलाते हुए कहा कि, हां यार! तेरी बात एकदम सच है। वाकई उनके जैसा साइंस शायद ही किसी स्कूल में कोई टीचर या मैम पढ़ाती हो। स्वाति बोली, -- जानते हो मैं अन्य स्कूलों के छात्रों से जब उनके साइंस के टीचर के बारे में पूछती हूं तो वह सभी कहती है कि, -कुछ पूछ मत यार मेरी साइंस की टीचर या मैम तो बिल्कुल बोर है। यार ! सच अब तुझसे क्या छिपाऊँ मेरी तो इच्छा होती है कि, मैं उनकी क्लास ही ना लूँ, लेकिन जब मैं अपनी जीनत मैम के बारे में उन्हें बताती हूं तो वह सभी कहती है कि यार! सच में तू बहुत लकी है।

वाकई यार हम सभी लकी हैं, जो जीनत मैम जैसी साइंस की टीचर हमे मिली है, वह जब भी साइंस का क्लास लेती हैं, तो हमे पता ही नहीं चलता कि जीनत मैम की क्लास कब खत्म हो गई, जी तो करता है की वह हमे पढ़ाती ही रहे और हम सभी पढ़ते ही रहें। तभी मीटिंग हॉल खुल गया और खुलने के थोड़ी देर बाद अनाउंस हुआ कि, सारे बच्चे जल्द से जल्द मीटिंग हॉल में आकर अपनी-अपनी जगह बैठ जाएं। सौभाग्य से उन सभी

आत्मा की शुद्धि के लिये रामधुन एक अनिवार्य मंत्र है। इसके साथ ही शुद्ध शरीर प्राप्त करने का प्रयास तो सब करते ही रहें। इसी प्रयत्न के दौरान कुदरती उपचार स्वतः मर्यादित हो जाता है और इससे आदमी बड़े बड़े अस्पतालों और योग्य डोक्टरों वगैरह की व्यवस्था करने से बच जाता है।

की सीट पहली पक्ति में ही थी। सभी के आ जाने के थोड़ी देर बाद प्रिंसिपल मैम के साथ ही अन्य टीचर और जीनत मैम आकर अपनी जगह बैठ गई फिर माइक से जीनत मैम को डायस पर बुलाया गया।

जीनत मैम ने माइक पर बोलते हुए कहा कि, - सबसे पहले तो आप बच्चो के साथ ही यहां उपस्थित तमाम टीचर्स और हमारी प्रिंसिपल मैम को चंद्रयान-3 की चंद्रमा पर सफलता पूर्वक लैंडिंग करने के लिए बहुत-बहुत हार्दिक बधाई लेकिन हमारे देश को यह सफलता यूँ ही नही मिली । इस सफलता को पाने के लिए हमारे देश के वैज्ञानिकों ने अपना सर्वस्व दिया है। शायद ! आपकोप तान हीं कए कस मयथ ाज बह मारेद`शक` वैज्ञानिकों ने तमाम उपकरण अपनी साइकिल पर लाद-लादकर खुद रिसर्च सेंटर तक लाए थे।

चंद्रयान-3 की सफलता से पहले चंद्रयान-1 का परीक्षण हमारे देश में किया गया, जिसमें आधे उपकरण अपने देश के थे, बाकि अमेरिका, बुलगारिया, और यूरोप से लिए गए थे। हमारे चंद्रयान-1 की सबसे बड़ी सफलता यह थी कि, वहा यानि की चांद पर पानी के होने की पुष्टि हुई थी। चंद्रयान-1 में नासा का एम-क्यूब (मून मिनर्रालोजी मैपर) भी लगा हुआ था। इसके बाद की कथा यानि कि चंद्रयान-2 के बारे में तो तुम सभी लोग जानते हो कि हम और हमारे वैज्ञानिक सफलता के बहुत करीब होकर फेल हो गए लेकिन उस फेल को भी हम विज्ञान की भाषा में फेल नही कह सकते क्योंकि वही से हमारे चंद्रयान-3 के सफलता की कहानी शुरू होती है।

तभी जीनत मैम ने कहा रश्मि तुम्हें याद है पिछली बार तुम्हारे साइंस में सबसे कम नंबर आए थे। तुम पूरी तरह से हताश और निराश हो गई थी , रो रही थी तभी मैंने तुमसे कहा था रश्मि कि, ''हमारे एक बार हारने और फेल होने से सब कुछ खत्म नही हो जाता बल्कि हम अपनी उस हार से अपने जीतने की सीख लेते है और उसके बाद साइंस में तुम्हारे सबसे ज्यादा नंबर आए ।'' बिलकुल यही चंद्रयान-2 के साथ हुआ वह पूरी तरह फेल नही हुआ क्योंकि फिर उसी से सीख लेकर हमारे वैज्ञानिकों ने चंद्रयान-3 का सफल प्रक्षेपण कर उस विफलता को बहुत पीछे छोड़ दिया । इसके लिए हमारे वैज्ञानिकों ने अपना रात दिन एक कर दिया। फिर हमारे पूर्व राष्ट्रपति भारत रत्न ए.

पी. जे. अब्दुल कलाम जिन्हे कि मिसाइल मैन भी कहा जाता है, ने कहा था कि --''यदि आप असफल होते हैं, तो कभी हार न मानें क्योंकि FAIL का अर्थ है'' सीखने का पहला प्रयास।

ऐसेह ीि वज्ञानअ पनेह रप्र यासक ेस ाथक ुछन ा कुछ सीखता और सुधार करता है क्योंकि विज्ञान एक प्रयोग है। हमारे चंद्रयान-2 के ज्यादातर उपकरण भी स्वदेशी थे लेकिन हमारा यह चंद्रयान-2 एकदम सफलता के नजदीक जाकर फेल हो गया उस समय पूरे देश के साथ ही साथ हमारे देश के वैज्ञानिकों की आंखे भी आंसुओं से भीग गई वे सभी हताश और निराश हो गए थे। ऐसी दुःख और विषाद की घड़ी में हमारे देश के प्रधानमंत्री ने एक नायक की तरह आगे बढ़कर हमारे वैज्ञानिकों के कंधो पर अपना हाथ रखते हुए कहा था कि, --''इससे आप कतई हताश और निराश ना हों। मैं और यह पूरा देश आपके साथ है । हमें और हमारे देश को यह पूरा यकीन है कि एक दिन आप चंद्रयान को चांद पर उतारने मे सफल हो जाएंगे । इस सफलता को पूर्ण करने में आप सभी पूरी तरह सक्षम है।''

और वाकई हमारे वैज्ञानिकों ने हमे चांद पर भेज दिया। जहा रूस का लूना-25 नाकाम और फेल हो गया वहीं हमने विश्व मंच पर अपनी टेक्नोलॉजी और विज्ञान का ना सिर्फ लोहा मनवा लिया बल्कि वे सभी अपने दांतो तले अंगुली दबाए हुए आश्चर्य में पड़े है। उन्हे यकीन नहीं हो रहा कि, आखिर भारत ने यह सफलता पा कैसे ली। सिर्फ इतना ही नही यह विश्व का सबसे कम बजट और लागत का अंतरिक्ष यान है। इसरो-भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन के वैज्ञानिकों ने चंद्रयान-3 को चंद्रमा के दक्षिणी ध्रुव पर उतारकर वहां पहली बार किसी देश के यान को भेजने का विश्व कीर्तिमान स्थापित किया है।

जो चांद कभी हमारे आपके किस्से कहानियों में था अब वही चांद हमारी मुट्ठी और हमारे विज्ञान की कहानियों मे शामिल हो गया है। हमसे पहले चांद पर चीन, जापान, अमेरिका, यूरोप जैसे देश थे, आज हम भी उन्हीं देशों में शामिल है। हालांकि हमने कई देशों से कुछ ना कुछ सहयोग भी लिया है। लेकिन हमारी इस सफलता के बाद एक सबसे बड़ा सवाल यह उठेगा कि, आखिर हमे या विश्व को इससे क्या हासिल होगा? तो मैं यही कहना या आप बच्चो को बताना चाहूंगी कि, चंद्रयान-3 में लगे उपकरण हमे सैकड़ों तरह के चित्र और आंकड़े देंगे, जिससे हम वहां मौजूद ठोस, द्रव, गैस के रूप में तत्वों की मौजूदगी, उनकी मात्र, प्रकार, बनावट आदि के बारे में अधिक से अधिक जान सकेंगे।

इसके अलावा इस अभियान से हम चंद्रमा पर मौजूद खनिजों के बारे में भी जान पाएंगे। वैसे चंद्रयान-3 में अब तक का सबसे सक्षम एक्स-रे स्पेक्ट्रोमीटर लगा है जो 25 किलोमीटर तक के दायरे में पड़ने वाले तत्वों से परावर्तित एक्स-रे डाटा दे सकेगा । इतना ही नहीं, बच्चों भविष्य में अंतरिक्ष में जीवन की खोज के मामले में हमारा यह चंद्रयान-3 मील का पत्थर साबित होगा। पृथ्वी, सूर्य, आकाशगंगा, तथा अन्य जाने-अनजाने सितारों के बहुत सारे रहस्य विश्व के सामने खुल जाएंगे। वैसे मैंने अपनी तरफ से तुम सभी को पूरी जानकारी देने की कोशिश की है फिर भी अगर और कुछ नया मुझे पता चलता है तो मैं तुम सभी लोगों को क्लास में बताऊंगी और हाँ किसी को अगर कुछ समझ में ना आया हो या उनके मन में कोई सवाल हो तो वह मुझसे पूछ सकता है। जब काफी देर तक बच्चों ने कुछ नहीं पूछा तो जीनत मैम थैंक्यू कहकर अपनी जगह बैठ गई। फिर स्वल्पाहार के बाद सारे बच्चे मीटिंग हॉल से बाहर निकल रहे थे, तो उन्हीं में आलोक, प्रमोद, राजेश, नीरज, स्वाति और प्रिया भी बाहर निकलते हुए कह रहे, सच ! आज जिसने भी जीनत मैम के मुंह से चंद्रयान-3 की कहानी या जानकारी नहीं ली, वे आजीवन इसकी भरपाई नही कर पाएंगे। हाँ यार! फिर इसके बाद सभी अपने-अपने घर चले गए।

संपर्कः

जज कॉलोनी, मियांपुर

जिला-- जौनपुर 222002 (U P)

मो. 7800824758

ई-मेलः rangnathdubey90@gmail.com

लालची मित्र

किसी गाँव में दो मित्र रहते थे। एक बार उन्होंने किसी दूसरी जगह जाकर धन कमाने की सोची। दोनों यात्रा पर निकल पड़े। रास्ते में जंगल पड़ता था। जब वे जंगल से गुजर रहे थे, तो उन्हें एक भालू अपनी ओर आता दिखाई दिया। दोनों मित्र डर गए। उनमें से एक को पेड़ पर चढ़ना आता था। वह भालू से बचने के लिए पेड़ पर चढ़ गया, पर दूसरा नीचे रह गया। जब उसे भालू से बचने का कोई रास्ता न सूझा तो साँस बंद करके जमीन पर लेट गया। उसने अपनी साँस को इस तरह रोक लिया मानो वह मर गया हो।

भालूउ सकेन जदीकअ ाया।उ सनेज मीनप रल`टे हुए मित्र को सूँघा और उसे मरा हुआ जानकर चल दिया। क्योंकि भालू मृत जीव को नहीं खाता जब भालू उसकी आँखों से ओझल हो गया तो वह उठ गया और तब पेड़ पर बैठा मित्र भी नीचे उतर आया। उसने पूछा, हे मित्र! मुझे बेहद खुशी है कि तुम्हारी जान गई। पर एक बात बता, भालू ने तेरे कान में क्या कहा?

दूसरा मित्र अपने मित्र से पहले ही नाराज था। वह उसे उसकी गलती का अहसास कराना चाहता था इसलिए बोला, हे मित्र भालू ने मुझे एक बहुत ही काम की बात कही है। उसने कहा है कि ऐसे मित्र का साथ छोड़ दो, जो मुसीबत के समय तुम्हारा साथ न दे और तुम्हें अकेला छोड़ जाए। अपने मित्र की बात सुनकर पहला मित्र बहुत लज्जित हुआ।

शिक्षा-सच्चे मित्र की पहचान विपत्ति में ही होती है।

पोस्टर मेकिंग प्रतियोगिता

भारत सरकार ही पहल 'स्वच्छता ही सेवा' के तहत गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति ने उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केंद्र, संस्कृति मंत्रालय के सहयोग से पोस्टर-मेकिंग प्रतियोगिता का आयोजन किया। क्नॉट प्लेस के सेंट्रल पार्क में आयोजित इस प्रतियोगिता का विषय था-स्वच्छता ही सेवा। यह कार्यक्रम राष्ट्रीय संस्कृति महोत्सव के तहत आयोजित किया गया था। करीब 320 छात्रों ने अपनी कल्पनाओं के रंग कैनवास पर उकेरे। छात्रों ने घर में स्वच्छता, स्कूल में स्वच्छता और समुदाय में स्वच्छता के उप-विषयों पर पोस्टर बनाए। समिति के निदेशक डॉ. ज्वाला प्रसाद ने बच्चों का उत्साहवर्धन किया।

अहिंसक संचार पाठ्यक्रम

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति और गांधी स्टडी सर्कल, जाकिर हुसैन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा संचालित अहिंसक संचार पाठ्यक्रम प्रमाण पत्र वितरण समारोहअ ायोजितर् कयाग या।ग ांधीद र्शनम ेंअ ायोजित इस कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में समिति के निदेशक, डॉ. ज्वाला प्रसाद उपस्थित थे। अध्यक्षता जाकिर हुसैन कॉलेज के प्राचार्य प्रोफेसर नरेंद्र सिंह, ने की।

इस अवसर पर विद्यार्थियों ने दैनिक जीवन में अहिंसक संचार के अभ्यास से जुड़े अपने अनुभव साझा किए। स्टडी सर्कल के संयोजक प्राफेसर संजीव कुमार और समिति के कार्यक्रम अधिकारी डॉ वेदाभ्यास कुंडू ने भी अपने विचार प्रकट किए।

टेकिंग गांधी टू स्कूल

समिति द्वारा चलाए जा रहे 'टेकिंग गांधी टू स्कूल' कार्यक्रम के तहत अक्टूबर माह में अनेक स्कूलों ने गांधी स्मृति का दौरा कर, महात्मा गांधी के जीवन को जानने-समझने का प्रयास किया।

एस डी पब्लिक स्कूल, पीतमपुरा के 46 बच्चों ने गांधी स्मृति का दौरा किया। बच्चों ने गांधी मल्टी-मीडिया प्रदर्शनी भी देखी।

ममता मॉडर्न सीनियर सेकेंडरी स्कूल के 142 बच्चों ने 6 अक्टूबर, 2023 को गांधी स्मृति का दौरा किया। समिति के गाइड ने उन्हें गांधी स्मृति संग्रहालय का अवलोकन करवाया।

17 अक्टूबर, 2023 को एमिटी इंटरनेशनल स्कूल, साकेत के सात शिक्षकों के साथ दसवीं कक्षा के 92 छात्रों ने अपने शैक्षिक दौरे कार्यक्रम के हिस्से के रूप में 'गांधी स्मृति' का दौरा किया। इस अवसर पर बच्चों ने गांधी के जीवन और संदेशों के बारे में जानकारी प्राप्त की।

हमारे नये प्रकाशन

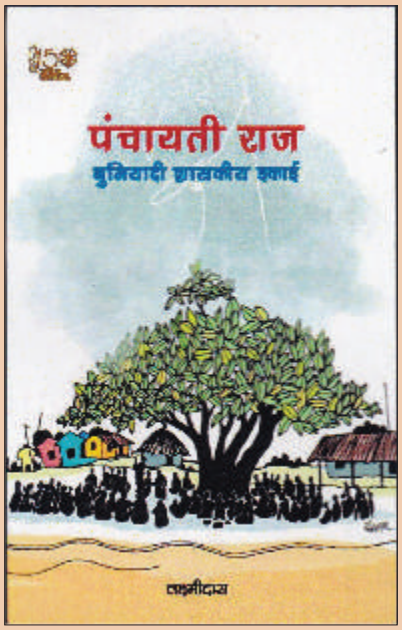

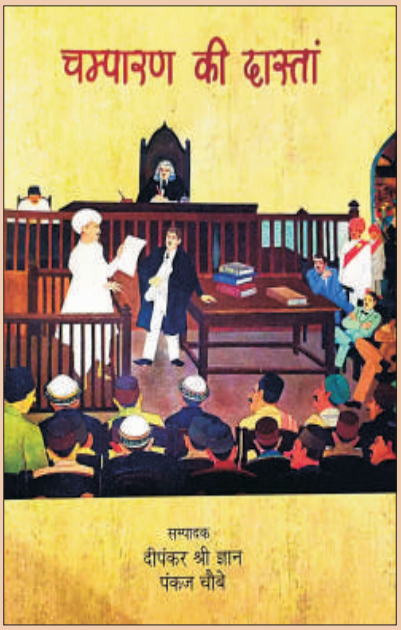

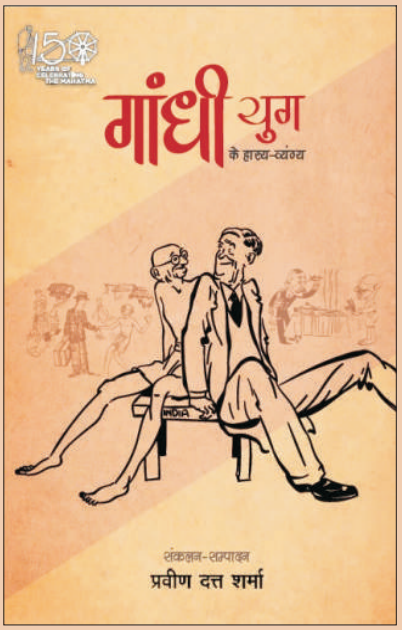

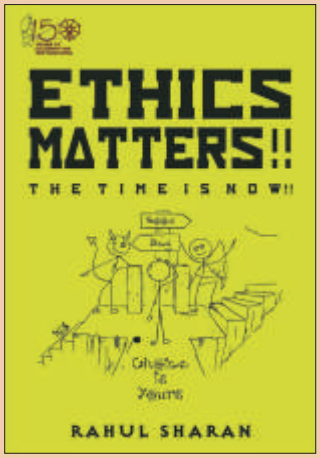

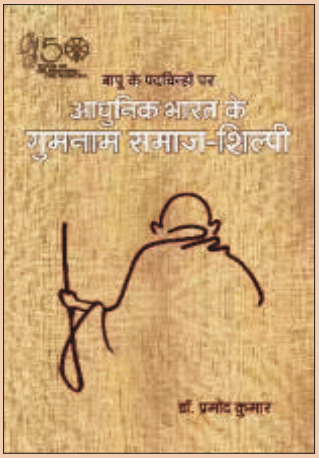

सम्पर्कः

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति

गांधी दर्शन, राजघाट, नई दिल्ली-110 002

फोनः 23392710, 23392709, 23011480, 23012843

फैक्सः 91.11.23011480, 23392706

ई-मेलः 2010gsds@gmail.com www.gandhismirti.gov.in

RNI NO. DELHIN/2018/76242

''आप मुझे जो सजा देना चाहते हैं, उसे
कम कराने की भावना से मैं यह बयान नहीं
दे रहा हूँ। मुझे तो यही जता देना है कि
आज्ञा का अनादर करने में मेरा उद्देश्य कानून
द्वारा स्थापित सरकार का अपमान करना
नहीं है, बल्कि मेरा हृदय जिस अधिक बड़े
कानून से-अर्थात अन्तरात्मा की आवाज को
स्वीकार करता है, उसका अनुसरण करना ही
मेरा उद्देश्य है।''

(मोहनदास करमचंद गांधी)

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, नई दिल्ली
(एक स्वायत्त निकाय, संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार)

प्रकाशक - मुद्रक : स्वामी गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति के लिए पोहोजा प्रिंट सोल्यूशंस प्रा. लि., दिल्ली - 110092
से मुद्रित तथा गांधी दर्शन, राजघाट, नई दिल्ली-110092 से प्रकाशित।